ग्रीन रिवोल्ट

हरित-नीरा रहे वसुंधरा

पेजः 4

नाले में बदल रही है गंगा की सहायक नदी *गोमती*

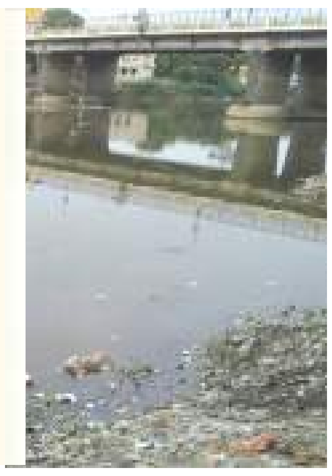

रविवारीय, 04 - 10 अप्रैल 2021 वर्ष- दो, अंक-35, रांची, कुल पृष्ठ 4 हिन्दी साप्ताहिक R.N.I. No. JHAHIN/2019/78094 www.greenrevolt.news मूल्यः 5 रूपये

ग्रीन रिवोल्ट के पाठकों से आग्रह है कि आप पर्यावरण, कृषि, जल संरक्षण, पशुपालन, बागवानी , पेट्स, वृक्षारोपण से संबंधित खबरें, समस्यायें, लेख,सुझाव, प्रतिक्रियायें या तस्वीरें हमें अवश्य भेजें। हमारा इमेल एवं ह्वाट्सएप नंबर है।

greenrevolt2019@gmail.com

9798166006

जलवायु परिवर्तन बना रहा है वायरस को ज्यादा शक्तिशाली

वायरस के म्युटेशन में जलवायु परिवर्तन और पर्यावरण को हो रहे विनाश की भी कोई भूमिका है?

वायरस बदलती परिस्थितियों में अपने आप को ढालने की कोशिश करते हैं पर जिस तरह से जंगलों का विनाश हो रहा है। जलवायु में बदलाव आ रहा है यह बदलाव उनमें म्युटेशन के रूप में सामने आ रहा है। काफी हद तक हम भी उसके लिए जिम्मेवार हैं।

हाल ही में प्रोसीडिंग्स ऑफ द रॉयल सोसायटी बी में प्रकाशित एक शोध से पता चला है कि वैश्विक तापमान में हो रही वृद्धि, जीवों में हो रहे नए म्यूटेशन्स को कहीं ज्यादा खतरनाक बना सकती है। ऐसा जीवों के प्रोटीन फंक्शन पर पड़ रहे हानिकारक प्रभावों के कारण हो रहा है।। इसके कारण जीवों के जीनोम में बदलाव आ जाता है। यह नए परिवेश में इन जीवों के लिए फायदेमंद हो सकता है, लेकिन कई बार यह म्युटेशन जीवों पर नकारात्मक असर भी डाल सकता है।

झारखंड में क्रशर उद्योग के लिये पहाड़ों को काटा जा रहा है, सड़क निर्माण में लाखों पेड़ कटे और अवैध बालू खनन से नदियां बर्बाद हो रही हैं

कैसे बचेगा? जल जंगल जमीन

वरीय संवाददाता

साल 2019 में जब झामुमो गठबंधन झारखंड में चुनाव जीत कर सत्ता में आया था तब रांची के कांग्रेस भवन में नेताओं विधायकों के साथ ही मीडिया का भी जमावड़ा लगा हुआ था। झारखंड सरकार के कद्दावर नेता डॉ. रामेश्वर उरांव पार्टी कार्यालय में दिग्गज पत्रकारों से घिरे हुये थे और बधाई में बड़े-बड़े गुलदस्तों को देख कर कह रहे थे कि मैं तो बुद्ध को मानता हूं और मुझे फूलों को यूं तोड़ कर गुलदस्तों में सजाना भी दुख पहुंचाता है। तब वहां ग्रीन रिवोल्ट के वरिष्ठ संवाददाता ने डॉ. रामेश्वर उरांव से पूछा कि अब आप सरकार बनाने जा रहे हैं तो राज्य में वन संरक्षण के लिये क्या कुछ खास किया जायेगा ? डॉ. रामेश्वर उरांव ने कहा कि हां बिल्कुल वृक्षारोपण पर ध्यान दिया जायेगा।

ग्रीन रिवोल्ट संवाददाता के यह पूछते ही कि झारखंड में सड़क निर्माण में लाखो पेड़ काट दिये गये हैं और रांची टाटा सड़क बनाने में तो सैकड़ो साल पुराने पेड़ों को काट कर लकड़ियां भी गायब कर दी गयी है। ऐसी बर्बादी की भरपाई के लिये सरकार का क्या प्लान होगा? *डॉ. रामेश्वर उरांव ने लगभग खींझते हुये कहा था कि राज्य में वन एवं पर्यावरण विभाग भी है वो ये सब देखेगा, जितने पेड़ निर्माण के लिये काटेंगे उससे दुगुना लगायेंगे बस्स और क्या सुनना चाहते हैं?* आज उस वाकये को डेढ साल होने को हैं, पर झारखंड में ऐसा कुछ नहीं हुआ है जो पर्यावरण एवं हरियाली बचाने में कोई उम्मीद जताता हो। उल्टे झारखंड की ऐतिहासिक राजमहल पहाड़ियों को खनन माफिया खत्म करने पर लगे हुये हैं। इसके 12 पहाड़ खनन से गायब हो चुके हैं।

रांची बीजूपाड़ा सड़क निर्माण के साथ ही उसके किनारों पर वृक्षारोपण करना था जिसे नहीं किया गया अब मुख्यमंत्री हेमंत सोरेन वृक्ष लगाने का आदेश दे रहे हैं। पेड़ लगाने और उसके रख रखाव में कोताही करने वाले ठेकेदारों और कंपनी पर कार्रवाई की बात कर रहे हैं, पर चुंकि ऐसे मामलों में सीधे कोइ प्रभावित नहीं होता इस कारण से अंततः कोई क्षति पुर्ति नहीं होती और न ही कोई कार्रवाई होती है पर अंततः जल जंगल जमीन का नुकसान हो चुका होता है?

हजारीबाग झील में मिट्टी भरा जा रहा है इससे वहां के लोग आक्रोशित हैं

उधर होगी लुप्त जलाशयों की खोज इधर हजारीबाग झील में मिट्टी भर कर निर्माण

एक तरफ सरकार पुराने जलाशयों के खोज के लिये एक टीम बना रही है वहीं हजारीबाग झील में मिट्टी भर कर निर्माण करा रही है। इससे हजारीबाग के सजग लोगों में क्षोभ है। कई लोगों का कहना है कि हजारीबाग झील शहर की शान है और सरकार इसे बजाय बचाने के इसके जल क्षेत्र में मिट्टी भर कर उसमें कोई निर्माण करवा रही है। वहीं रांची में गायब हो चुके पुराने जलाशयों के खोज का कोई स्पष्ट उद्देश्य समझ नहीं आ रहा है। जबकि हाल के कुछ सालों में सरकार के नाक के नीचे ही जलाशयों की बर्बादी हुयी है।

हाल ही में एक रिपोर्ट आयी है कि हजारीबाग और रामगढ झारखंड के प्रदूषित शहरों में से एक हैं। राजधानी रांची में कई ऐसे इलाके हैं जहां के तालाबों और नदियों को भर कर बडी कॉलोनियां और बस्तियां बस गयी हैं जिसे अब हटाना किसी सरकार के बूते की बात नहीं है। सबसे हास्यास्पद बात है कि सरकार पुराने जलाशयों का निशान खोज रही है और वर्तमान में जो जलाश्य अस्तित्व में हैं उसमें अतिक्रमण को पूरी तरह से रोकने में विफल है। कांके डैम में ही कैचमेंट में बने कई मकानों को अधिकारियों एवं मापी करने वालों को पैसे खिला कर छोड़ देने के आरोप भी लगते रहे हैं।

यही हाल रहा तो ब्लू पौंड की भरमार हो जायेगी

रांची में हटिया से आगे पत्थर खनन से पहले एक विशाल जलाशय बन गया है। इसका जल सूर्य की रोशनी पड़ने पर नीला दिखता है। शहर में इसकी खुबसूरती की चर्चा होती है, इसे ब्लू पौंड कहते हैं और बहुतेरे लोग इसे देखने निहारने आते हैं। जानकार बताते हैं कि यहां पहले चारो ओर पहाड़ और चट्टानें थी जिसे पत्थर के लिये खोदा गया और इतने बड़े इलाके में अंदर तक खनन करने से ये इतना विशाल तालाब बन गया। इस उदाहरण को देखें तो झारखंड में अनवरत पत्थर खनन से ब्लू पौंड की भरमार हो सकती है। जो आवश्यक पहाड़ों की बलि लेकर ही निर्मित होते रहे हैं।

झारखंड की नदियों के हत्यारे हैं बालू खनन माफिया

राज्य में बालू का अवैध खनन पुरानी समस्या है इसका उठाव और अवैध तरीके से परिवहन का सिलसिला अब भी जारी है. जेसीबी तक से बालू उठाव हो रहा है. इससे ना सिर्फ नदियों की गोद भयावह तरीके से सूनी हो रही है. नदियां अपने रास्तों से भटकने लगी हैं। बालू के माइनिंग के संबंध में सैंड माइनिंग गाइडलाइन 2020 (केंद्र सरकार), एनजीटी के साथ-साथ राज्य सरकार के अपने प्रावधान हैं. एनजीटी की मानें तो जून से अक्टूबर के बीच बालू के उत्खनन पर रोक रहती है. किसी भी स्थिति में जेसीबी से बालू का उठाव नहीं करना है। लेकिन झारखंड में इस रोक को बालू माफिया मुंह चिढा रहे हैं। ज्यादतर नदियों का इकोसिस्टम ये बर्बाद कर चुके हैं ।

सीसीएल की पहली ग्रीनफील्ड एमडीओ परियोजना होगी कोतरे बसंतपुर पचमो

प्रतीकात्मक चित्र

संवाददाता

रांची : झारखण्ड राज्य स्थित कोल इंडिया की अनुषंगी कंपनी सेंट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड (सीसीएल) सस्टेनेबल माइनिंग के माध्यम से सभी स्टेकहोल्डर्स के समग्र विकास के लिए प्रतिबद्ध है। इसी कड़ी में वेस्ट बोकारो कोलफील्डस के उत्तरी छोर पर एमडीओ माध्यम से शुरू की जाने वाली प्रथम ग्रीनफील्ड परियोजना - कोतरे बसंतपुर पचमो एक महत्वांकाक्षी परियोजना है जिसे अब शीघ्र ही मूर्त रूप दिया जायेगा। यह एमडीओ मॉडल पर संचालित होने वाली सीसीएल के साथ-साथ कोल इंडिया की पहली ग्रीनफील्ड परियोजना होगी। पूर्णतः विकसित होने पर परियोजना की वार्षिक उत्पादन क्षमता प्रतिवर्ष 5 मीलियन टन (एमटी) होगा।

ज्ञातव्य है कि कोतरे बसंतपुर परियोजना कोयला खदान (विशेष प्रावधान) अधिनियम 2015 के अंतर्गत सीसीएल को आवंटित की जाने वाली पहली परियोजना थी जिसे 19अप्रैल, 2018 को जारी किए गए आवंटन आदेश की तिथि से एक निश्चित समय के अंदर परियोजना को प्रारंभ करना था। इस परियोजना से प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के मार्गदर्शन में कोयला आयात को शुन्य करने एवं'आत्मनिर्भर भारत'के परिकल्पना को पूरा करने में मील का पत्थर साबित होगी। साथ ही इससे कोयला खनन में निजी क्षेत्र की कंपननियों को अवसर मिलेगा।

सीएमडी, सीसीएल पी.एम. प्रसाद ने बताया कि एमडीओ माध्यम से प्रारंभ व संचालित की जाने वाली कोल इंडिया की पहली ग्रीनफील्ड परियोजना, कोतरे बसंतपुर का कार्य आवंटित किया जा चुका है। उन्होंने झारखण्ड सरकार के निरंतर सहयोग एवं कोयला मंत्री प्रल्हाद जोशी, सचिव (कोयला) अनिल कुमार जैन, ...*शेष पेज तीन पर*

भारत में पाया गया कैंसर के उपचार में उपयोग होने वाला पौधा

दयानिधि

एक अंतरराष्ट्रीय शोध में बताया गया है कि भारत में पाए गए छोटे से पौधे में पाए जाने वाला रसायन, कैंसर की बीमारी को जड़ से समाप्त कर देता है।

भारत में एक छोटा-सा झाड़ीदार पौधा पाया गया है, जिसे स्थानीय तौर पर मोड्डू सोप्पू (जस्टिसिया वेनाडेंसिस) के रूप में जाना जाता है। यह विशेष रूप से मानसून के मौसम के दौरान कर्नाटक के कोडागु जिले में पाया जाता है। यहां के निवासियों द्वारा इसका उपयोग मीठे पकवान बनाने के लिए किया जाता है।

एक अंतरराष्ट्रीय शोध में इस पौधे में फाइटोकेमिकल्स मौजूद होने की बात कही गई है, जोकि कैंसर के उपचार में उपयोग किए जाने वाली (एंटीकैंसर) दवा है। शोध में बताया गया है कि इस छोटे से पौधे में पाए जाने वाला केमिकल कैंसर की बीमारी को जड़ से समाप्त कर देता है। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ कम्प्यूटेशनल बायोलॉजी एंड ड्रग डिज़ाइन में प्रकाशित एक अध्ययन के अनुसार पौधों में पाया जाने वाला फाइटोकेमिकल्स कैंसर के खिलाफ लड़ाई, लड़ने में उपयोगी होता है। हजारों पौधों में प्राकृतिक तौर पर उत्पादित कैमिकल होते हैं। वास्तव में लगभग 40 प्रतिशत आधुनिक फार्मास्यूटिकल या दवा उद्योग वनस्पति के प्राकृतिक उत्पादों पर निर्भर रहते हैं।

कर्नाटक में बैंगलोर पीईएस विश्वविद्यालय के सी.डी. वंदना और के.एन. शांति और तुमकुर के सिद्धगंगा संस्थान के विवेक चंद्रमोहन ने भी कई फाइटोकेमिकल्स की जांच की जिन्हें वैज्ञानिक साहित्य में कैंसर के उपचार में उपयोग किए जाने वाला (एंटीकैंसर) बताया गया। उन्होंने एंजाइम थाइमिडाइलेट सिंथेज़ के बारह अलग-अलग यौगिकों को अच्छी तरह से देखने के लिए एक कंप्यूटर मॉडल का इस्तेमाल किया और इस गतिविधि की तुलना एक संबंधित दवा, कैपेसिटाबाइन के साथ की, जो इस एंजाइम के लिए उपयोग की जाती है। कोशिकाओं के दोहराने वाले डीएनए को बनाने में थाइमिडिलेट सिंथेज़ शामिल होता है। कैंसर में, अनियंत्रित कोशिकाएं जो बार-बार बनती रहती है, यह एक समस्या है। यदि इस एंजाइम को रोक दिया जाए तो यह कैंसर कोशिकाओं के डीएनए को नष्ट कर देगा और कैंसर के विकास को रोक देगा।

यह दो यौगिकों की गतिविधि और कैपेसिटाबाइन की तुलना में एंजाइम पर अधिक मजबूती से रोक लगा देता है। पहला, कैंपस्ट्रोल, कोलेस्ट्रॉल के समान संरचना वाला एक प्रसिद्ध पौधे का केमिकल है, दूसरा स्टिग्मास्टरोल, पौधों की कोशिकाओं की संरचना को जोड़ने वाला एक और प्रसिद्ध फाइटोकेमिकल है। इसने अपने आप को पहले की अपेक्षा अधिक स्थिर साबित किया और एक कैंसर (एंटीकैंसर) की दवा के रूप में इसकी आगे की जांच और परीक्षण किए जाने की जरुरत है।

यह शोध कम्प्यूटेशनल बायोलॉजी एंड ड्रग डिज़ाइन के इंटरनेशनल पत्रिका में प्रकाशित हुआ है।

किसानों के दल ने बीएयू के लाभकारी कृषि तकनीकों को देखा

रांची : फारमर्स फर्स्ट प्रोग्राम से जुड़े नगड़ी प्रखंड के चिपड़ा व कुदलोंग गाँव के 60 आदिवासी किसानों के दल ने सोमवार को बीएयू के लाभकारी कृषि तकनीकी प्रक्षेत्रों का भ्रमण किया. डॉ एके तिवारी ने उद्यान विभाग तथा टेक्नोलॉजी पार्क में लगे बागवानी फसलों एवं खाद्यान फसलों की तकनीकों से दल को अवगत कराया. दल ने बीएयू मशरूम उत्पादन ईकाई में मशरूम उत्पादन की तकनीकी जानकारी ली. वेटनरी कॉलेज में डॉ रवीन्द्र कुमार ने बकरी, मुर्गी एवं सूकर प्रक्षेत्रों के भ्रमण पशुओं के पालन प्रबंधन की व्यावहारिक जानकारी दी. भ्रमण में आलोका बागे, सुरेश महतो, प्रवीण तरुण एक्का एवं राजेश कु सिंह ने सहयोग प्रदान किया गया. दल ने निदेशक प्रसार शिक्षा डॉ जगरनाथ उराँव की अध्यक्षता में आयोजित कृषक गोष्ठी में भी भाग लिया. मौके पर परियोजना के मुख्य अन्वेंशक डॉ निभा बाड़ा, उप अन्वेंशक डॉ रवीन्द्र कुमार एवं डॉ डॉ एके तिवारी ने फारमर्स फर्स्ट प्रोग्राम के विभिन्न कार्यक्रमों के लाभूकों से बाधाओं एवं सफलता के बारे में जाना।

बीएयू के पांच छात्रों का एग्रीकल्चरल फील्ड ऑफिसर तथा एक छात्र का प्रबंधक पद पर हुआ चयन

संवाददाता

रांची :बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के कृषि संकाय के पांच कृषि स्नातक छात्र - छात्राओं का चयन एग्रीकल्चरल फील्ड ऑफिसर के पद पर हुआ है. आईबीपीएस द्वारा लिये गये अंतिम साक्षात्कार के आधार पर इन छात्रों का केनरा बैंक एवं यूनाइटेड कमर्शियल बैंक में चयन हुआ है. इन छात्रों को सात से आठ लाख का पैकेज मिला है. चयनित छात्रों में सुधांशु रंजन, अमनदीप रंजन, अर्जुन कुमार अग्रवाल, सुमन मिंज एवं डेजी नीलिमा तिग्गा शामिल है. संकाय की एमएससी छात्रा मेनका कुमार को बड़ी सफलता मिली है. इनका चयन फ़ूड कारपोरेशन ऑफ़ इंडिया के प्रबंधक पर हुआ है.

कुलपति डॉ ओंकार नाथ सिंह ने प्लेसमेंट में मिली इस बड़ी सफलता को छात्रों की मेहनत एवं लगन तथा शिक्षकों के बेहतर मार्गदर्शन को श्रेय दिया है. कुलपति के साथ डीन एग्रीकल्चर डॉ एमएस यादव, डायरेक्टर स्टूडेंट वेलफेयर डॉ डीके शाही, डॉ पीके सिंह तथा संकाय के प्राध्यापकों ने छात्रों की सफलता पर हर्ष व्यक्त किया. छात्रों को बधाईयों के साथ उज्जवल भविष्य की शुभकामना दी. यह जानकारी कृषि संकाय के प्लेसमेंट सेल प्रभारी डॉ एचसी लाल ने दी।

हिमाचल में बर्ड फ्लू का नया रूप, सौ से अधिक पक्षियों की मौत

रोहित पराशर

जनवरी-फरवरी के बाद हिमाचल प्रदेश में बर्ड फ्लू की दूसरी लहर शुरू हो गई है

देशभर में जनवरी माह में बर्ड फ्लू की पहली लहर के बाद अब हिमाचल प्रदेश में इसकी दूसरी लहर ने दस्तक दे दी है। बर्ड फ्लू की दूसरी लहर में हिमाचल की पौंग डैम झील में इस बार पिछली बार से एवियन इन्फ्लुएंजा का नया वेरिएंट पाया गया है। वन विभाग की वन्यप्राणी विंग के अनुसार जनवरी-फरवरी के बाद अब अप्रैल में बर्ड फ्लू के मामलों में बढ़ोतरी देखी गई है। वन्यप्राणी विंग की प्रमुख डॉ. अर्चना शर्मा ने बताया कि मार्च 25 के बाद अभी तक पौंग डैम की दो बीटों में 100 विदेशी परिंदे मृत मिले हैं।डॉ. शर्मा ने बताया कि भोपाल के राष्ट्रीय उच्च सुरक्षा पशु रोग संस्थान (एनआईएचएसएडी) ने मृत पक्षियों के नमूनों में एच 5 एन 8 एवियन इन्फ्लुएंजा मिलने की पुष्टि की है, जोकि जनवरी-फरवरी माह में पाए गए एवियन इन्फ्लुएंजा से भिन्न है।

जनवरी में हिमाचल में एच5एन-1 एवियन इन्फ्लुएंजा पाया गया था। जबकि इस बार इसका नया रूप जो पहले से भी घातक बताया जा रहा एच 5 एन 8 (ल्5ठ8) एवियन इन्फ्लुएंजा पाया गया है।

गौरतलब है कि जनवरी माह में देशभर के 10 राज्यों समेत हिमाचल प्रदेश में बर्ड फ्लू पाया गया था और इस दौरान पौंग डैम क्षेत्र में 5000 से अधिक विदेशी परिंदें मृत मिले थे। इसके अलावा प्रदेश के 5 जिलों में कई स्थानों में 200 से अधिक मृत कौए भी पाए गए थे।उस दौरान केंद्र सरकार और हिमाचल सरकार ने बर्ड फ्लू पर नियंत्रण और नजर रखने के लिए कई टीमों का गठन किया था। साथ ही हिमाचल प्रदेश के कई क्षेत्रों में मीट और चीकन की बिक्री पर भी रोक लगाने के साथ बाहरी राज्यों से आने वाली पोल्ट्री के आयात पर रोक लगा दी गई थी।

अब जब एक बार फिर से बर्ड फ्लू की दस्तक से वन विभाग और पशुपालन विभाग की टीमों को एलर्ट पर रखा गया है। 240 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में फैले पौंग डैम वैटलैंड में हर साल 1,15,000 से अधिक विदेशी परिंदे आते हैं। अब अप्रैल माह में एक बार फिर रोजाना मृत विदेशी परिंदों के मिलने का सिलसिला जारी है। इसके लिए वन विभाग और पशुपालन विभाग की टीमों का गठन कर मृत पक्षियों की तलाश का काम जारी है। वहीं जो मृत पक्षी टीमों को मिल रहे हैं उन्हें बर्ड फ्लू से संक्रमित पक्षियों को नष्ट करने के लिए तय किए गए दिशा निर्देशों के तहत नष्ट किया जा रहा है।

सरकार की ओर से पौंग डैम एरिया में हर प्रकार की गतिविधियों पर रोक लगा दी है। इसके अलावा सरकार ने स्थानीय लोगों को पौंगडैम क्षेत्र में पशुओं के चराने पर पाबंदी लगा दी है। अभी तक मृत पक्षियों में ज्यादातर रेड हेडेड गीज और ग्रे लाइट गूज, कॉमन टील, फार्मोरेंट प्रजाती के पक्षी दर्ज किए गए हैं। उन्होंने बताया कि ये पक्षी सेंट्रल ऐसिया, मंगोलिया, साइबेरिया और चाइना से आते हैं। वरिष्ठ पशुरोग चिकित्सक डॉ. विक्रम सिंह वशिष्ठ ने बताया कि यह पहला मौका है जब हिमाचल प्रदेश में बर्ड फ्लू के मामले देखे गए हैं। पौंग डैम वैटलैंड में मृत मिले विदेशी पक्षियों में से 98 फीसदी रेड हैडेड गीज हैं। उन्होंने बताया कि इन पक्षियों में ये वायरस हमेशा रहता है। इनमें यदि रोग प्रतिरोध क्षमता कम हो जाए या नेचुरल रिसोर्सिज की कमी हो तो इनकी मृत्यू होना शुरू हो जाती है।

गांव सूखनारा के निवासी बलवीर सिंह पठानिया ने बताया कि एक बार फिर से मृत पक्षियों के मिलने का सिलसिला शुरू हो गया है। जिससे अब गांववालों ने लेक के पास जाना बंद कर दिया है। वन्यप्राणी विंग की प्रमुख डॉ. अर्चना ने बताया कि बर्ड फ्लू से निपटने के लिए एहतियातन कदम उठाए जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि अब गर्मियों के शुरू होने के साथ ही माईग्रेटरी बर्ड के वापस लौटने का सिलसिला भी शुरू होगया है। इसलिए पहले ही तरह इसका इतना फैलाव नहीं होगा और अभी डैम एरिया में बहुत कम ही पक्षी रहे हैं। विभाग अन्य संबद्ध विभागों के साथ मिलकर टीमों का गठन कर काम किया जा रहा है।

गर्म हो रहा हिमालय

लॉकडाउन में प्रदूषण नियंत्रण के बाद भी इतिहास का दूसरा सबसे गर्म वर्ष 2020 रहा, लेकिन 2021 के शुरुआती तीन महीने रिकॉर्ड के नए संकेत दे रहे हैं। खासकर भारत के लिए ये तीन महीने खासे चौंकाने वाले हैं। इसकी बड़ी वजह यह है कि भारत के मौसम के लिए बेहद अहम एवं संवेदनशील माने जाने वाले हिमालय से मिल रहे संकेत अच्छे नहीं हैं। पिछले तीन माह के दौरान हिमालयी राज्यों में बढ़ती गर्मी और बारिश न होने के कारण वहां के लोग चिंतित हैं। गर्मी के आदी न होने के कारण पहाड़ी लोगों की दिक्कतें बढ़ गई हैं

2020 में प्लस वन जर्नल में छपे शोध में भारत, कनाडा और जापान के वैज्ञानिकों ने पाया कि जलवायु परिवर्तन और मौसम में आ रहे बदलावों की वजह से सेब बागवानी बड़ी तीव्र गति से अधिक ऊंचाई वाले क्षेत्रों की ओर शिफ्ट हो रही है। शोध के अनुसार, हिमाचल प्रदेश में जहां 1980 के दशक में सेब बागवानी 1,200 से 1,500 मीटर तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों में होती थी, वो वर्ष 2000 तक 1,500 से 2,000 मीटर की ऊंचाई वाले क्षेत्रों और वर्ष 2014 तक 3,500 मीटर तक की ऊंचाई वाले क्षेत्रों तक पहुंच गई।

धरती का स्वर्ग कहे जाने वाले कश्मीर पर भी जलवायु परिवर्तन का असर दिख रहा है। कश्मीर घाटी पिछले एक दशक से मौसम और तापमान में साफ बदलाव देख रही है। तापमान में बदलाव का अर्थ अधिकतम तापमान से है। गर्मी के मौसम में तो कश्मीर में झुलसा देने वाली गर्मी पड़ने लगी है। हर साल पिछले सालों के मुकाबले अधिकतम तापमान का रिकॉर्ड टूट रहा है

कुछ साल पहले तक जिन गांवों में जल धाराएं और झरने हुआ करते थे, अब ये सूख चुके हैं और 2019 में तो हालात इतने गंभीर हो गए कि गर्मी शुरू होते ही पानी के टैंकर मंगाने पड़े। नैनीताल के 70 वर्षीय वरिष्ठ पत्रकार राजीव लोचन शाह बताते हैं कि आज से 30 साल पहले तक मई और जून में भी कोट और स्वेटर पहने जाते थे। सर्दियों का यह हाल था कि जिला प्रशासन को पेयजल लाइनों की पाइपों पर एक विशेष प्रकार की घास लगानी पड़ती थी। दरअसल, उस समय सर्दियों में पानी की पाइपलाइन जम जाती थी। कई जगह बड़ी पाइपों के नीचे आग जलाई जाती थी। लेकिन अब तो कई होटलों में एयरकंडिशन लग चुके हैं। शोधकर्ता महिपाल नेगी बताते हैं कि जलवायु परिवर्तन का असर पक्षियों और वनस्पति पर भी पड़ा है। उत्तराखंड का राज्य पक्षी मोनाल काफी ऊंचाई वाले इलाकों में रहता है। लेकिन वह सर्दियों में 1,000 मीटर तक भी आ जाता था क्योंकि यहां भी उसे बर्फ मिल जाती थी। लेकिन पिछले 40 सालों में वह 2,000 मीटर से नीचे नहीं देखा गया है। उसी तरह उत्तराखंड के ऊंचाई वाले इलाकों में देवदार होता है और निचले इलाकों में चीड़ का जंगल पाया जाता है। अब चीड़ 2,500 मीटर की ऊंचाई वाले इलाकों तक पहुंच गया है क्योंकि उसे गर्माहट मिलने लगी है। यानि हम मनुष्यों के कृत्य ने हिमालय को भी खतरे ने डाल दिया है

मछली के बेकार फेंके गए हिस्सों से वैज्ञानिकों ने बनाई पर्यावरण अनुकूल प्लास्टिक

वैज्ञानिकों ने मछली के बेकार, फेंके गए हिस्सों से प्लास्टिक बनाने में सफलता हासिल की है जो ने केवल पर्यावरण के अनुकूल है साथ ही इससे बढ़ते कचरे को भी नियंत्रित किया जा सकता है। इससे जुड़ी रिपोर्ट अमेरिकन केमिकल सोसाइटी द्वारा आगामी 08 अप्रैल को होने वाली मीटिंग में प्रस्तुत की जाएगी। वैज्ञानिकों ने मछली के शरीर के बेकार फेंके गए अंगों जैसे सिर, हड्डियों और त्वचा से एक बायोडिग्रेडेबल प्लास्टिक बनाने में सफलता हासिल की है। इस परियोजना के मुख्य अन्वेषक, फ्रांसेस्का कीर्टन के अनुसार यदि इसे सफलतापूर्वक विकसित करा जाता है तो मछली के तेल पर आधारित यह पॉलीयूरेथेन प्लास्टिक सम्बन्धी जरूरतों को पूरा कर सकता है। प्लास्टिक के निर्माण में यह जरुरी है कि हम इस बात का ध्यान रखें की एक बार इस्तेमाल होने के बाद उसका क्या होगा, क्या उसे ठीक से रीसायकल किया जा सकता है और उसका पुनः उपयोग कर सकते हैं। इसके लिए उन्होंने कचरे में पड़े मछली के बेकार हिस्सों से इस प्लास्टिक को बनाने की शुरुवात की थी। इसके लिए वैज्ञानिकों ने इन बेकार हिस्सों से प्राप्त तेल को पॉलीयूरेथन में परिवर्तित करने के लिए एक प्रक्रिया विकसित की है। कीर्टन के अनुसार लेकिन इसमें सबसे बड़ी समस्या दुर्गन्ध की थी, जब तेल पर काम कर रहे थे तो वो मछली की तरह दुर्गन्ध कर रहा था, लेकिन प्रक्रिया के दौरान उसमें से यह दुर्गन्ध भी पूरी तरह गायब हो गई थी। एक अन्य प्रयोग में शोधकर्ताओं ने यह जांचने का प्रयास किया है कि एक बार इस प्लास्टिक का उपयोग हो जाने के बाद यह कितनी जल्दी और आसानी से नष्ट हो सकता है। इसके लिए उन्होंने एक एंजाइम लिपेस का इस्तेमाल किया है जो मछली के तेल में मौजूद वसा को तोड़ने में सक्षम है। उन्हें पता चला की इस एंजाइम की मदद से ऐसा किया जा सकता है। यह दिखाता है कि इसे आसानी से बायोडिग्रेड किया जा सकता है। अगले चरण में वैज्ञानिकों की योजना इसके भौतिक गुणों का अध्ययन करने की है जिससे इसे वास्तविक दुनिया में लाने की है जिससे इसका उपयोग पैकेजिंग और कपड़ों के निर्माण में किया जा सके।

साभार डीटीइ

एरोपोनिक्स सिस्टम से सिंचाई में कम होती है पानी की खपत

एरोपोनिक्स सिस्टम इस प्रणाली में एक बंद और अर्ध-बंद वातावरण में पौधों को बिना मिटटी के विकसित करना होता है। जिसके लिए पोषक तत्वों से भरपूर पानी को उसकी जड़ों पर छिड़का जाता है। इसकी मदद से उसमें तनों की कोशिकाओं का विकास होता है।

इस तकनीक को 1973 में कैबट फाउंडेशन लैबोरेटरीज द्वारा विकसित किया गया था। एरोपोनिक्स सिस्टम उन सब्जियों की खेती के लिए उपयुक्त है जिनकी जड़ें ऑक्सीजन और नमी जैसी सर्वोत्तम स्थिति को अपना सकती हैं। इन्हें नियंत्रित तापमान और आद्रता की स्थिति में उगाया जा सकता है। इस तकनीक की मदद से किसान पोषक तत्वों से भरपूर फसल प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही इससे पानी और पोषक तत्वों की भी बचत होती है। पारंपरिक रूप से एक किलोग्राम बैंगन के उत्पादन के लिए 250 से 350 लीटर पानी की जरुरत होती है, वहीं एरोपोनिक्स की मदद से यह खपत 15 से 20 लीटर रह जाती है।

पिपरवार कोयला खदान बंद होने से सुधरी आबो हवा

गुरविंदर सिंह

कभी झारखंड का सबसे बड़ा कोयला खदान रह चुका पिपरवार का खदान 30 साल बाद बंद हो चुका है। खदान की वजह से 1100 हेक्टेयर की जमीन तहस-नहस हो चुकी थी। सेंट्रल कोलफील्ड लिमिटेड (सीसीएल) ने वर्ष 2015 से खदान से बर्बाद हुई जमीन को संवारने का काम शुरू किया है। कंपनी ने अब तक 272 हेक्टेयर जमीन पर पौधरोपण, इको पार्क निर्माण और जलाशय बनाए हैं, ताकि बेकार जमीन का दोबारा उपयोग हो सके।खनन के बाद बेकार हुई जमीन को वापस सुधारकर देना एक जरूरी प्रक्रिया है। खनन कंपनियां कानूनी बाध्यताओं की वजह से जमीन को ठीक कर वापस करती हैं।कुछ महीनों पहले तक पिपरवार कोयला खदान की वजह से यह इलाका धूल से भरा होता था। कोयले की कालिख हर जगह देखी जा सकती थी। दीवार हो, मिट्टी हो या कुछ और। अब स्थिति बदली है। जहां पहले खनन होता था वहां अब हरे-भरे पौधे और निर्मल जल से भरे जलाशय बन गए हैं। हरियाली के साथ-साथ यह उद्यान रोजगार लेकर भी आया है। यह सब संभव हुआ है केवल कोयला खदान बंद होने के बाद। झारखंड की राजधानी रांची से 70 किलोमीटर दूर स्थित चतरा जिला का पिपरवार कोयला खदान एक वक्त में राज्य का सबसे बड़ा खदान माना जाता था। यहां रहने वाली एक महिला कठपुतली देवी ने बताया कि ''मैं खदान की जमीन पर बने इको पार्क में अपने पति के साथ काम करती हूं। पार्क से हर महीने 7,500 रुपए की आमदनी होती है जिससे हमारे चारों बच्चों की पढ़ाई का खर्च निकल आता है। खनन के बाद जमीन को आम लोगों के लिए वापस उपयोगी बनाने के लिए कई तरह के प्रयास हो रहे हैं। पिपरवार में कोयला खदान 1990 में शुरू हुआ था। यह एक ओपन कास्ट यानी खुली खदान थी जो लगभग 1,120 .25 हेक्टेयर में फैली हुई थी। हर साल औसतन 120 लाख टन कोयला यहां से निकाला जाता था। जून 2020 आते-आते खदान का कोयला खत्म हो गया और खनन का काम बंद करना पड़ा। खनन के बाद नियमों के मुताबिक खदान की जमीन को दोबारा उपयोग में लाने लायक बनाना होता है इसलिये खनन के बाद जमीन को आम लोगों के लिए वापस उपयोगी बनाने के लिए कई तरह के प्रयास हो रहे हैं। पिपरवार में कोयला खदान 1990 में शुरू हुआ था। यह एक ओपन कास्ट यानी खुली खदान थी जो लगभग 1,120 .25 हेक्टेयर में फैली हुई थी। हर साल औसतन 120 लाख टन कोयला यहां से निकाला जाता था। जून 2020 आते-आते खदान का कोयला खत्म हो गया और खनन का काम बंद करना पड़ा।खनन के बाद नियमों के मुताबिक खदान की जमीन को दोबारा उपयोग में लाने लायक बनाना होता है।

खदान बंद होने के बाद आया बदलाव

खनन के बाद यहां की जमीन किसी काम की नहीं रह गई थी। अब पार्क बनने के बाद कठपुतली देवी की तरह कई और लोगों को रोजगार मिला है। इलाके की आबोहवा भी काफी बदली है। इको पार्क में कठपुतली देवी के अलावा चार और लोग काम करते हैं। 28 वर्षीय मोहम्मद अब्बास पास के बहेरा गांव में रहते हैं। उन्होंने कहा, ''हम इस इलाके में कई वर्षों से रहते हैं। यहां ट्रक, कोयले की धूल और प्रदूषण के अलावा कुछ भी नहीं था। अब इलाका काफी साफ-सुथरा है। जहां से लोग गुजरना तक नहीं चाहते थे वहां अब पार्क की वजह से लोग बेंच पर बैठकर समय गुजारते हैं,'' अब्बास कहते हैं। खनन बंद होने के बाद सीसीएल ने कायाकल्प वाटिका नाम का एक इको पार्क विकसित किया। यहां अमरूद, कटहल जैसी 50 प्रजातियों के दो हजार से अधिक पौधे लगाए गए हैं। ये पौधे 2 से 20 फीट तक लंबे हो गए हैं।

क्या इको पार्क बनाने से बनती है बात?

विशेषज्ञ मानते हैं कि खदान को दोबारा उपयोग में लाना तब बेहतर होता जब इसे केवल जैव-विविधता की दृष्टि से विकसित किया जाता। ''इको पार्क में इंसानों का प्रवेश भी होगा। प्रकृति को इससे पूरा लाभ नहीं मिलेगा। अगर खदान के बाद बेकार हुई जमीन को जैव-विविधता का केंद्र बनाया जाता और इसे इंसानी गतिविधियों से दूर रखा जाता तो वहां पक्षी और जानवरों की गतिविधियां बढ़ती,'' भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) खड़गपुर के पर्यावरण विज्ञान और इंजीनियरिंग, संकाय से जुड़े जयंत भट्टाचार्य कहते हैं।''व्यवसायिक गतिविधि को बढ़ावा न देकर सिर्फ जैव-विविधता को बढ़ावा देने की दृष्टि से अगर खनन वाले इलाके को विकसित किया जाए तो इसका पूरा लाभ मिलेगा। जानवरों को आने-जाने के लिए एक गलियारे का निर्माण भी किया जाना चाहिए। खदान की बेकार जमीन को संवारते वक्त वहां रहने वाले जानवरों का ख्याल भी रखा जाना चाहिए, और उसे उसी हिसाब से विकसित किया जाना चाहिए,'' भट्टाचार्य कहते हैं।

इको पार्क के अलावा सीसीएल ने 30 हेक्टेयर की जमीन को खेती के लिए उपयोगी बनाया है। यहां स्थानीय लोग खेती करेंगे। ''किसान अर्जित भूमि के छोटे हिस्से में गेहूं और मक्का उगाने लगे हैं। इससे उन्हें उपार्जन का नया रास्ता मिल रहा है। यहां बने तीन जलाशयों से खेती और पार्क के लिए पानी मिलता है,'' सीसीएल के जनसंपर्क विभाग के प्रमुख अनुपम कुमार राणा ने कहा। सीसीएल के मुताबिक यह खदान जून 2020 में बंद हुआ। हालांकि, यहां मौजूद कोयले को अब भी ले जाया जा रहा है। बचे हुए इलाके को भी जल्दी संवारा जाएगा। सीसीएल के मुताबिक इस काम को भारत के नियंत्रक और महालेखा परीक्षक (सीएजी) ने अपने 2019 के ऑडिट में सराहा।

पर्यावरणविद् की सलाह, योजनाबद्ध तरीके से हो काम

पर्यावरण के जानकार सलाह देते हैं कि जमीन को वापस उपयोगी बनाने का काम योजना के साथ किया जाता चाहिए। जैव-विविधता को दोबारा दुरुस्त करने के लिए पौधरोपण में स्थानीय प्रजातियों के पौधों को शामिल करना चाहिए। ''खदान वाले इलाके में इस तरह के प्रयास सराहनीय हैं। इससे आसपास के लोगों को प्रदूषण से मुक्ति मिल सकती है। यहां पानी के स्रोत बनाने का भी फायदा होगा। हालांकि, सीसीएल को ध्यान रखना चाहिए कि स्थानीय पौधों को पौधरोपण में प्राथमिकता दें। इससे पौधे अधिक मजबूती से टिके रहेंगे,'' कहते हैं नितिश प्रियदर्शी, जो रांची विश्वविद्यालय के भूविज्ञान विभाग से बतौर असिस्टेंट प्रोफेसर जुड़े हैं। उन्होंने जोर देकर कहा कि बाहरी प्रजाति के पौधे किसी काम के नहीं और स्थानीय माहौल में न ढलने की वजह से मर भी सकते हैं। वन विभाग के अधिकारियों के मुताबिक सीसीएल ने इस प्रक्रिया में इन बातों का ध्यान रखा है। यहां कटहल, बेल, महुआ, जामुन जैसे पौधे लगाए गए हैं।

अगर सीसीएल ने हमारे साथ मिलकर पौधरोपण किया होता तो हम उन्हें स्थानीय आबोहवा को ध्यान में रखकर सलाह दे सकते थे,'' वन विभाग के रेज अधिकारी छोटे लाल साह कहते हैं। वह कहते हैं कि मेरे ख्याल से कायाकल्प वाटिका बनाना काफी नहीं है। इलाके के आसपास भी एक ग्रीन बेल्ट विकसित करना होगा ताकि प्रदूषण के प्रभाव को कम किया जा सके।

सीसीएल पिपरवार के आसपास 10 खदान चलाता है।

यह इलाका करनपुरा कोलफील्ड के अंतर्गत आता है जिसमें रांची, हजारीबाग, चतरा और लातेहार जिला आता है। इस इलाके में 1,230 वर्ग किलोमीटर में कोयला खदान है जहां 12,110.84 मिलियन टन कोयले का अनुमानित भंडार है। इलाके में पिपरवार को छोड़कर बचे सभी खदान चल रहे हैं।

क्या एनर्जी ट्रांजिशन के लिये पेट्रोल डीजल से मोटी कमाई का मोह छोड़ पायेगी सरकार?

कुंदन पांडेय

कोविड -19 महामारी के दौरान पता चला कि सरकार राजस्व कमाने के लिए पेट्रोलियम प्रोडक्ट पर किस तरह निर्भर है। केंद्र सरकार के राजस्व का लगभग 25 प्रतिशत फॉसिल फ्यूल (जीवाश्म ईंधन) पर लगे कर से आता है। इसकी तुलना में राज्य सरकारें अपने कुल राजस्व का करीब 13 प्रतिशत ऊर्जा पर कर लगाने से कमाती हैं।

भारत सरकार का फॉसिल फ्यूल पर अत्यधिक कर लगाना नया नहीं है। सरकार कहती रही है कि इससे लोग पेट्रोल-डीजल का कम इस्तेमाल करेंगे और यह जलवायु परिवर्तन के लिहाज से सही होगा। पर सरकारी आंकड़े बताते हैं कि कीमत बढ़ाने से पेट्रोल-डीजल की खपत कम नहीं होती। विशेषज्ञ इस बात पर जोर देते हैं कि वर्तमान कर संरचना के साथ एनर्जी ट्रांजिशन नहीं हो सकता। एनर्जी ट्रांजिशन से तात्पर्य पारंपरिक ऊर्जा स्त्रोतों की खपत कम कर नवीन ऊर्जा जैसे सौर, वायु, बायो गैस इत्यादि पर निर्भरता बढ़ाना है। हाल में हुए पेट्रोल-डीजल के दामों में बेतहाशा वृद्धि ने कई तरह के सवाल खड़े किए। तब भी पेट्रोल-डीजल के दाम बढ़े रहे जब अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल की कीमत रही। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि सरकार ने इसपर करीब 60% का कर लगा रखा है। इसकी वजह से बढ़ती महंगाई और पेट्रोल डीजल की कीमत के सैकड़ा छूने की तो काफी चर्चा हो रही है। लेकिन एक बात पर चर्चा नहीं हो पा रही है कि फॉसिल फ्यूल से होने वाली यह आमदनी क्या देश को नवीन ऊर्जा की तरफ बढ़ने में मदद होगी या मुश्किल पैदा करेगी।

एक तरफ लोग सरकार से पेट्रोलियम प्रोडक्ट पर टैक्स कम करने की मांग करते रहे तो दूसरी तरफ सरकार इस बढ़े टैक्स को राजकोषीय स्थिति में सुधार के नाम पर बचाव करती है। वित्त राज्य मंत्री अनुराग सिंह ठाकुर ने 15 मार्च को लोकसभा में कहा, ''मौजूदा राजकोषीय स्थिति को ध्यान में रखते हुए इतना उत्पाद शुल्क लगाया गया हैं। जीवाश्म ईंधन में पेट्रोलियम प्रोडक्ट के साथ-साथ कोयला इत्यादि भी शामिल है। इस पर सरकार का अधिक कर लगाना नया नहीं है। वर्तमान सरकार ने सत्ता में आने के बाद से जीवाश्म ईंधन पर टैक्स बढ़ाकर काफी राजस्व अर्जित किया है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार 2013 - 14 में, भारत सरकार ने पेट्रोल, डीजल और प्राकृतिक गैस पर केंद्रीय उत्पाद शुल्क से 12,35,870 करोड़ रुपये कमाए। उस साल सरकार के कुल अर्जित राजस्व में इसका योगदान करीब 4.3% रहा। अगर इसकी तुलना बीते साल से की जाए तो अप्रैल से लेकर जनवरी तक- महज दस महीनों में सरकार ने उत्पाद शुल्क से करीब 24,23,020 करोड़ रुपये कमाए। यह सरकार के कुल राजस्व का 12.2% है।

हाल ही में 'एनर्जी: टैक्स एंड ट्रांज़िशन इन इंडिया' से एक अध्ययन प्रकाशित हुआ जिसमें जीवाश्म ईंधन पर सरकार की निर्भरता का अध्ययन किया गया। पुणे स्थिति एक गैर-लाभकारी संस्था प्रयास के इस अध्ययन में कहा गया है, ''ऊर्जा क्षेत्र से 2018-19 में केंद्र और राज्यों के कर राजस्व में लगभग 18% का योगदान हुआ। अपने राजस्व कमाने के वास्ते केंद्र सरकार जीवाश्म ईंधन पर अधिक आश्रित है। करीब 25 फीसदी। बनिस्बत इसके, राज्य सरकारें जीवाश्म ईंधन से करीब 13% राजस्व कमाती हैं। पेट्रोलियम प्रोडक्ट आवश्यक वस्तुओं की श्रेणी में आता है

ऊर्जा क्षेत्र से सरकार कई तरह से राजस्व अर्जित करती है। इसमें वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी), जीएसटी क्षतिपूर्ति सेस, कस्टम ड्यूटी, उत्पाद शुल्क, राष्ट्रीय आपदा आकस्मिक शुल्क और बिक्री कर आदि शामिल हैं। इसके अतिरिक्त सरकार को कोयले, कच्चे तेल और प्राकृतिक गैस पर रॉयल्टी के माध्यम से भी राजस्व मिलता है। सरकार के राजस्व में जिला खनिज निधि (डीएमएफ) का भी योगदान है।

जीवाश्म ईंधन के अर्थशास्त्र पर ध्यान देने की जरूरत

विशेषज्ञ अशोक श्रीनिवास ने कहा कि पारंपरिक ऊर्जा के स्त्रोतों से नवीन ऊर्जा की तरफ जाने में कम से कम 10 से 20 साल लगने वाले हैं। पारंपरिक ऊर्जा के स्त्रोतों से नवीन ऊर्जा की तरफ जाने के इस प्रक्रिया को अंग्रेजी में एनर्जी ट्रांजिशन का नाम दिया गया है। इस ट्रांजिशन में सरकार की टैक्स प्रणाली महत्वपूर्ण भूमिका अदा करने वाली है।

जब भी एनर्जी ट्रांजिशन की चर्चा होती है तो अक्सर तकनीकी से संबंधित मुद्दों या लोगों की नौकरी की बात की जाती है। जैसे कोयले के खदानों में काम करने वाले मजदूरों का क्या होगा। पर शायद ही कभी जीवाश्म ईंधन पर सरकार के लगाए टैक्स और इससे जुड़े अर्थ तंत्र की बात होती है। यह भविष्य को कैसे प्रभावित करेगा! ''अगर हम कर व्यवस्था को यथावत रखते हैं, तो भविष्य में इससे बात नहीं बनने वाली है। सरकार कमाई के लिए जीवाश्म ईंधन पर कुछ ज्यादा ही निर्भर है। भविष्य के लिए इस कर व्यवस्था को बदलना होगा।

अनुमान से 10 करोड़ वर्ष बाद हुआ था धरती पर ऑक्सीजन का विकास

धरती पर ऑक्सीजन में महत्वपूर्ण वृद्धि लगभग 243 करोड़ साल पहले हुई थी, जिसे ग्रेट ऑक्सिडेशन एपिसोड की शुरुआत कहते हैं। हाल ही में किए एक नए शोध से पता चला है कि धरती पर ऑक्सीजन का विकास वर्तमान अनुमान से करीब 10 करोड़ वर्ष बाद हुआ था। इस विकास ने धरती पर जीवन के लिए मार्ग प्रशस्त किया था। अनुमान है कि धरती पर ऑक्सीजन में महत्वपूर्ण वृद्धि लगभग 243 करोड़ साल पहले हुई थी, जिसे ग्रेट ऑक्सिडेशन एपिसोड की शुरुआत कहते हैं जोकि पृथ्वी के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है। यह जानकारी दक्षिण अफ्रीका में चट्टानों के विश्लेषण में सामने आई है। इससे जुड़ा शोध यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफ़ोर्निया और अंतराष्ट्रीय शोधकर्ताओं की एक टीम द्वारा किया गया है, जोकि जर्नल नेचर में प्रकाशित हुआ है।

शोध के अनुसार अपनी प्रारंभिक उपस्थिति के बाद ऑक्सीजन में नाटकीय रूप से उतार-चढ़ाव आता रहा है, जब तक कि वो बहुत बाद में वायुमंडल का स्थायी घटक नहीं बन गया था।यह उतार-चढ़ाव वातावरण में मौजूद ऑक्सीजन और मीथेन जैसी अन्य ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा के बीच एक सीधे संबंध को स्पष्ट करते हैं जो पृथ्वी पर अतीत में कुछ सबसे चरम जलवायु परिवर्तनों को समझाने में मदद कर सकते हैं।

170 दिनों से लगातार लगी हुई है उत्तराखंड के जंगलों में आग

राजु सजवान/ मनमीत सिंह

पिछले साल 15 अक्टूबर से उत्तराखंड के जंगलों में आग लगने का सिलसिला शुरू हुआ था, जो लगातार जारी है।फोरेस्ट सर्वे ऑफ इंडिया के पोर्टल के मुताबिक, 5 अप्रैल को उत्तराखंड में 71 जगहों में आग लगी हुई थी।

उत्तराखंड के जंगलों में पिछले साल 15 अक्टूबर से शुरू हुआ आग का सिलसिला एक दिन भी नहीं थमा। प्रदेश में लगातार जंगलों में आग लग रही। नवंबर से शुरू हुए विंटर सीजन (सर्दी का मौसम) की बात हो या मार्च-अप्रैल का प्री मानसून (मानसून पूर्व) की, हर दिन कहीं न कहीं जंगलों में आग लगी रही। इसकी बड़ी वजह है कि न तो 2020 के मानसून सीजन में प्रदेश में पर्याप्त बारिश हुई और ना ही मानूसन के बाद बारिश हुई। सर्दी के सीजन में भी बारिश नहीं हुई। उत्तराखंड में अमूमन 15 फरवरी से जंगलों में आग लगना शुरू होती है और मई के अंत तक आग लगती रहती है। वन विभाग इसे फोरेस्ट फायर सीजन कहता है। विभाग के आंकड़े बताते हैं कि 2020 के फायर सीजन में जंगलों में आग लगने की घटनाएं कम हुई। सूत्र बताते हैं कि इस फायर सीजन में 37 दिन जंगलों में आग लगी। फायर सीजन बीतने के बाद मानसून सीजन शुरू हो गया। यह ज्यादा दिन नहीं चला। सितंबर में तो बारिश का सिलसिला बिल्कुल थम ही गया। ऐसे में फायर सीजन बीतने और 15 अक्टूबर 2020 के दौरान 25 दिन जंगलों में आग रही। लेकिन 15 अक्टूबर 2020 से लेकर 5 अप्रैल 2021 के दौरान उत्तराखंड में कहीं न कहीं जंगलों में आग लगी रही। यानी कि राज्य में लगातार 170 दिन से अधिक समय हो चुका है, जब जंगलों में आग लगी हुई है। विभाग का कहना है कि इस दौरान वन विभाग के आंकड़ों के अनुसार 1 अक्टूबर 2020 से लेकर 4 अप्रैल, 2021 की सुबह तक राज्य के जंगलों में आग लगने की 989 घटनाएं हो चुकी हैं, जिनमें 1297.43 हेक्टेअर जंगल जल चुके हैं। आंकड़े बताते हैं कि नवंबर 2020 से जनवरी 2021 के दौरान राज्य के जंगलों में 470 आग लगने की घटनाएं हुई, जबकि नवंबर 2019 से लेकर जनवरी 2020 के दौरान केवल 39 घटनाएं हुई थी।

जनवरी 2020 में आग की घटनाओं को देखते हुए राज्य के वन मंत्री हरक सिंह रावत को कहना था कि राज्य में अब 12 महीने का फोरेस्ट सीजन हो गया है। फोरेस्ट सर्वे ऑफ इंडिया की रिपोर्ट के मुताबिक 5 अप्रैल को जंगलों में बड़ी आग की एक्टिव घटनाओं के मामले में उत्तराखंड का नंबर मध्यप्रदेश के बाद दूसरा था। एक्टिव घटना से आशय है कि आग लगी हुई है। मध्य प्रदेश में 93 घटनाएं एक्टिव थी, जबकि उत्तराखंड में 71 जगहों पर आग लगी हुई थी। उल्लेखनीय है कि साल 2020 को जहां अब तक का दूसरा गर्म वर्ष माना गया था, वहीं साल 2021 के शुरुआती तीन महीने भारत के लिए खासे गर्म रहे हैं। खासकर हिमालयी राज्यों के लिए यह तीन माह काफी चुनौती भरे रहे हैं। इन तीन महीनों के दौरान जहां सामान्य से कम बारिश रिकॉर्ड की गई है, वहीं अधिकतम तापमान भी सामान्य से काफी अधिक रिकॉर्ड किया जा रहा है। हिमालयी राज्यों के कई इलाकों में तो अधिकतम तापमान ने पिछले सारे रिकॉर्ड तोड़ दिए हैं।

मौसम विभाग के अनुसार इस बार जनवरी से मार्च तक उत्तराखंड में केवल 10.9 मिमी बारिश दर्ज की गई, जबकि सामान्य तौर पर इस अवधि में 54.9 मिमी बारिश होती है। यानी सामान्य से 80 प्रतिशत कम बारिश हुई। आग से सबसे ज्यादा प्रभावित पौड़ी जिले में 92 प्रतिशत कम बारिश दर्ज की गई। इस अवधि में पौड़ी जिले में सामान्य रूप से 36.6 मिमी बारिश होती है, लेकिन इस बार मात्र 3.1 मिमी बारिश हुई। दरअसल, हिमालयी राज्यों में बारिश के पैटर्न में बदलाव और बढ़ती गर्मी के लिए काफी हद तक जलवायु परिवर्तन का असर माना जा रहा है। अगर जंगलों में लगने वाली आग को रोकने का प्रबंध ठीक नहीं किया गया तो इसके परिणाम काफी नुकसानदायक साबित हो सकते हैं।

बांध बनाने के खिलाफ हैं बागमती इलाके के लोग

पुष्यमित्र

मुजफ्फरपुर और दरभंगा के 109 गांवों के किसान तटबंध बनाये जाने का विरोध कर रहे हैं

बिहार के मुजफ्फरपुर में बागमती नदी के किनारे रहने वाले बाशिंदे एक बार फिर से एकजुट होने लगे हैं। उन्होंने तय किया है कि वे किसी भी सूरत में अपने इलाके में बागमती नदी पर तटबंध नहीं बनने देंगे। इसके लिए मुजफ्फरपुर जिले के गायघाट और बेनीबाद इलाके में लगातार बैठकों का दौर चल रहा है। दूसरी तरफ सरकार कह रही है कि इस इलाके को बाढ़ से बचाने के लिए बागमती नदी के शेष बचे इलाके पर तटबंध बना लेना जरूरी हो गया है। वर्ष 2018 में सरकार ने तटबंध बने या ना बने इसपर विचार करने के लिए एक कमेटी भी बनाई पर इस कमेटी से राय लिए बिना फिर पुनः तटबंध बनाने की तैयारी में लग गयी।

सालाना बाढ़ से प्रभावित होने वाले इस इलाके के लोग आखिर क्यों बाढ़ सुरक्षा के नाम पर बनाये जा रहे तटबंध के खिलाफ हैं, यह सवाल कई लोगों के लिए चकित कर देने वाला हो सकता है। मगर बागमती के इलाके के लोगों के लिए यह बहुत सरल मामला है। कल्याणी गांव के जगरनाथ पासवान कहते हैं, तटबंध बन जायेगा तो बाढ़ नहीं आयेगी। बाढ़ नहीं आयी तो उपजाऊ मिट्टी नहीं आयेगी। फिर हम सबकी खेती चौपट हो जायेगी। हमारा हाल भी वैसा ही हो जायेगा, जैसा उन इलाके के लोगों का हो गया है, जहां तटबंध बन गये हैं, बल्कि हम बाढ़ की आपदा को सह सकते हैं, मगर खेती चौपट हो गयी तो हम कहीं के नहीं रहेंगे।

मौजूदा परिप्रेक्ष्य में जब बिहार में तटबंध निर्माण ही बाढ़ सुरक्षा का सबसे बड़ा उपाय माना जा रहा है उस वक्त जगरनाथ पासवान का यह तर्क हमें उलटबांसी जैसा लग सकता है। मगर दिलचस्प है कि इस तर्क से उन 109 गांव के ज्यादातर लोग सहमत हैं, जहां बागमती बाढ़ प्रबंधन योजना' के फेज 3(बी) और फेज 5(ए) के तहत इस बार तटबंध बनने जा रहे हैं। बिहार सरकार ने मुजफ्फरपुर के गायघाट से लेकर दरभंगा के हायाघाट तक के बीच बागमती नदी पर न सिर्फ तटबंध बनाने का फैसला कर लिया है, बल्कि मौजूदा बजट में इसके लिए 548.13 करोड़ रुपये का प्रावधान भी कर लिया गया है। यह खबर इन इलाके के लोगों के वज्रपात जैसी है, क्योंकि ये 2012 से ही ऐसी किसी परियोजना का खुलकर विरोध कर रहे हैं।

कमिटी बनी पर कागज तक सिमट कर रह गयी

वर्ष 2018 में जब लोगों के विरोध के बावजूद यहां तटबंध निर्माण शुरू हो गया था तो हजारों किसानों ने हाईवे जाम कर दिया। इस विरोध के बाद सरकार ने काम रोक दिया और इसकी समीक्षा के लिए तीन सदस्यीय कमिटी का गठन किया था। कमिटी के एक महत्वपूर्ण सदस्य अनिल प्रकाश कहते हैं कि कमेटी को

वर्ष 2012 से ही तटबंध बनाये जाने का विरोध कर रहे हैं मुजफ्फरपुर और दरभंगा के 109 गांवों के किसान पर सरकार तटबंध बनाने की पुरजोर कोशिश कर रही है किसानों का मनाना है कि तटबंध के बन जाने से वे उस उपजाऊ मिट्टी से वंचित रह जायेंगे जो हर साल बागमती अपने साथ लाती है। बागमती पर जहां तटबंध बने हैं, वहां के खेतों की उर्वरकता घटी है।

काम भी नहीं करने दिया गया और उसकी रिपोर्ट भी तैयार नहीं हुई। इससे पहले ही सरकार ने अपनी मर्जी से काम शुरू कर दिया। इस कमिटी में अनिल प्रकाश के अलावा प्रसिद्ध नदी विशेषज्ञ दिनेश कुमार मिश्र और आईआ-ईटी के प्रोफेसर राजीव सिंह शामिल हैं। अनिल प्रकाश कहते हैं कि अब तक उस कमिटी की एक ही बैठक हुई है। हां, समय-समय पर उसका समय बढ़ाया जाता रहा है। कमिटी के एक अन्य महत्वपूर्ण सदस्य दिनेश कुमार मिश्र जिन्होंने 'बागमती की सदगति' नाम से एक महत्वपूर्ण पुस्तक भी लिखी है, कहते हैं- दरअसल बागमती के दो हिस्से पर पहले से तटबंध बन चुके हैं। इनमें से एक हिस्सा हायाघाट से खगड़िया तक का है तो दूसरा हिस्सा सीतामढ़ी जिले के ढेंग जहां से बागमती नदी नेपाल से भारत में प्रवेश करती है, से मुजफ्फरपुर के गायघाट तक का है। सीतामढ़ी के खोरीपाकर से दरभंगा के कनौजर घाट के बीच का हिस्सा जो बच गया वहां बागमती की धारा अभी स्थिर नहीं हुई है, वह बार-बार अपना रास्ता बदलती रही है। इस इलाके का आकार किसी तश्तरी जैसा है, जहां हर बार पानी फैल जाता है। इसलिए इसे कभी तटबंध निर्माण के अनुकूल नहीं माना गया। वे पूछते हैं कि राज्य के इंजीनियरों ने ही जब यहां तटबंध बनाने के मसले पर दो दफा मना कर दिया था तो अब सरकार इस काम के लिए जोर क्यों दे रही है!वे कहते हैं, इसके अलावा जिन इलाकों में बागमती पर तटबंध बने हैं, उसके अनुभव भी बहुत अच्छे नहीं रहे। उस आसपास के इलाके में मिट्टी की उर्वरकता घटी है और मछुआरों की हालत खराब हुई है। इसलिए लोग तटबंध के खिलाफ हैं।

तटबंध बाढ़ के साथ रोक देते हैं मिट्टी के लिए जरूरी खाद-पानी

दिनेश कुमार मिश्र की पुस्तक बागमती की सद्गति में यह वर्णित है कि बागमती को नेपाल में वैसा ही सम्मान हासिल है, जैसा भारत में गंगा को। नेपाल की राजधानी काठमांडू के करीब से बहने वाली बागमती की उर्वरकता के बारे में यह मिथकीय कथा प्रसिद्ध है कि अगर उसकी धारा में सूखी लाठी भी रोप दी जाये तो उसमें भी कोपलें फूंट पड़ती हैं। बागमती के किनारे के किसान भी इस बात से सहमत हैं। दरभंगा-मुजफ्फरपुर जिले की सीमा पर बसा गांव धनौर इसका सटीक उदाहरण है। इस गांव का नाम धनौर इसलिए पड़ा था, क्योंकि यहां धान का काफी उत्पादन होता था। मगर जब से यहां तटबंध बना यहां की उर्वरकता प्रभावित होने लगी।

गांव के एक मल्लाह उपेंद्र सहनी कहते हैं, हमारा सबसे अधिक नुकसान इस तटबंध ने किया है। पहले बरसात में नदी का पानी आसपास फैलता था तो गांव के तालाब और गड्ढे भर जाते थे। हमलोग वे गड्ढे जमीन मालिकों से मोल ले लेते थे और फिर वहां मछलियां पकड़ते थे। अब जब से ये तटबंध बना हैं, हमलोगों को भात-रोटी पर भी आफत है। हमें मजबूरन पलायन करने और खेतिहर मजदूर बनने पर विवश होना पड़ा है। मगर सरकार का ध्यान इन बातों पर नहीं है। वह हर हाल में बागमती नदी के बचे हिस्से पर तटबंध बनाने का काम पूरा कर लेना चाहती है। दरअसल बिहार सरकार की बाढ़ नियंत्रण नीति का सारा दारोमदार ही तटबंधों के निर्माण पर है और अब तक राज्य की लगभग सभी नदियों पर 3760 किलोमीटर से अधिक तटबंध बन चुके हैं। हालांकि इसका आकलन नहीं किया जाता कि इतने तटबंध बने, उसका फायदा हुआ या नुकसान!

आंकड़े इस बात की गवाही देते हैं कि इन तटबंधों ने बाढ़ के खतरे को बढ़ाने का ही काम किया है। आजादी के तत्काल बाद 1954 में जब राज्य में सिर्फ 160 किलोमीटर लंबे तटबंध थे तब राज्य की 25 लाख हेक्टेयर जमीन ही बाढ़ प्रभावित थी। अब बाढ़ प्रभावित जमीन का क्षेत्रफल सरकारी आंकड़ों के मुताबिक 68.8 लाख हेक्टेयर और गैर सरकारी आंकड़ों के मुताबिक 72.95 लाख हेक्टेयर पहुंच गया है। यानी तटबंध बने तो बाढ़ प्रभावित इलाका तीन गुना बढ़ गया।मगर राज्य का जल संसाधन विभाग इन तर्कों पर ध्यान नहीं देता। वह लगातार तटबंधों का निर्माण कर रहा है। बिहार में 394 किलोमीटर की लंबाई में बहने वाली बागमती नदी पर पहले से 478.14 किलोमीटर लंबे तटबंध बनाये जा चुके हैं, अब सरकार इस नदी पर अलग-अलग चरणों में और 246 किलोमीटर लंबा तटबंध बनाने जा रही है। पिछले 12 साल में इस नदी पर तटबंध बनाने में करीब 18 सौ करोड़ रुपये खर्च हो चुके हैं। ताजा फेज में 548.13 करोड़ रुपये खर्च होने जा रहे हैं। इसके जरिये दरभंगा, मुजफ्फरपुर और समस्तीपुर जिलों के कुल 3.36 लाख हेक्टेयर क्षेत्र और 93.13 लाख आबादी को बाढ़ से सुरक्षा दिलाने का दावा भी है।

जबकि बागमती नदी के किनारे सीतामढ़ी से खगड़िया जिले तक बसने वाले ग्रामीणों को इस नदी की बाढ़ से ज्यादा परेशानी नहीं है। वे चाहते हैं कि बाढ़ का पानी हर साल उसके खेतों तक पहुंचे, ताकि बिना खाद के वह बंपर फसल उगा सके। बिहार के एक अन्य रिवर एक्टिविस्ट रंजीव कहते हैं कि सरकार को यह देखना चाहिए कि बागमती पर बने तटबंध कितनी दफा टूट चुके हैं। इस बात का भी आकलन कर लेना चाहिए कि उपज किस क्षेत्र में अधिक होती है। जहां तटबंध बने हैं या जहां तटबंध नहीं बने हैं।

दिनेश कुमार मिश्र की पुस्तक बागमती की सदगति में ही मिलता है। वे लिखते हैं- ''मिथिला क्षेत्र में बाढ़ के कई रूप देखने को मिलते हैं। नदी के पानी के खेतों तक आने को 'बाढ़' कहा जाता था। सिंचाई के लिए उसे छह या अधिक बार पानी की जरूरत होती थी, यह काम नदी बिना किसी लागत के पूरा कर देती थी। कभी-कभार नदी का पानी रिहाइशी इलाके के दरवाजों तक हिलोरें मारता था, उसे 'बोह' कहा जाता था। 25-30 साल के अंतराल पर ऐसे मौके आते थे जब नदी का पानी इतना अधिक हो जाये कि वह घरों की खिड़कियों को छूने लगे, ऐसी बाढ़ को 'हुम्मा' कहा जाता था। स्थिति और विकराल हो जाये और जानवरों को खूंटे से खोल कर छोड़ देना पड़े तो ऐसी बाढ़ को 'साह' कहा जाता था। अपने पूरे जीवनकाल में लोग एक या दो बार ही साह का अनुभव ले पाते थे। इसके बाद जो होता था उसे 'प्रलय' कहा जाता था।

दरअसल धीरे-धीरे बिहार में यह मुद्दा बहस का केंद्र बनता जा रहा है कि क्या तटबंध बाढ़ को रोकने में कारगर हैं? क्या तटबंधों की वजह से राज्य में खेतों की उर्वरकता घट रही है? क्या बाढ़ सिर्फ आपदा ही है।

भारत में कोरोना वायरस का नया रूप है डबल म्यूटेंट?

एजेंसियां

हाल ही में एक खबर सामने आई थी जिसमें कहा गया था भारत में मिला कोरोनावायरस 'डबल म्यूटेंट' है। कोविड-19 से, जिससे पूरी दुनिया त्रस्त है। कितना खतरनाक है यह "डबल म्यूटेंट"? यदि वैज्ञानिकों की मानें तो "डबल म्यूटेंट" शब्द वायरस के एक नए संस्करण को बताता है जिसमें पहले से पहचाने गए दो वेरिएंट की विशेषताएं होती हैं। हालांकि वैज्ञानिकों की मानें तो डबल म्यूटेंट की कोई वैज्ञानिक परिभाषा नहीं है। यह बस एक अन्य म्यूटेंट है जो उस जगह के लिए नया है।

देश में कोरोना वायरस के 771 चिंताजनक और एक नए तरह के वैरिएंट का पता लगा है। इसमें ब्रिटेन के वायरस बी.1.1.7 के 736 पॉजिटिव नमूने, दक्षिण अफ्रीकी वायरस लिनिएज (बी.1.351) के 34 पॉजिटिव नमूने और ब्राजील लिनिएज (पी.1) वायरस का एक नया मामला सामने आया था। उसके साथ ही महाराष्ट्र से जो नमूने लिए थे उनमें ई484क्यू और एल452आर म्यूटेशन के अंशों वाला म्यूटेंट मिला था जिसे 'डबल म्यूटेंट' कहा जा रहा है। भारत में मिला यह "डबल म्यूटेंट" वायरस कितना खतरनाक है इस बारे में अभी कुछ भी ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। लेकिन इतना जरूर है कि महाराष्ट्र से लिए गए नमूनों के विश्लेषण से पता चला है कि दिसंबर 2020 की तुलना में ई484क्यू और एल452आर म्यूटेशन के अंशों वाले नमूनों में वृद्धि हुई है। इस प्रकार का म्यूटेशन दर्शाता है कि यह वायरस शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली से बचने में कारगर है। साथ ही इसका प्रभाव भी पहले से कहीं अधिक है। यह म्यूटेशन वहां लगभग 15 से 20 फीसदी नमूनों में पाए गए हैं। लेकिन भारत में एक बार फिर जिस तरह मामलों में वृद्धि हो रही है उसमें इस म्यूटेंट का कोई हाथ है इस बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। इस बाबत सही स्थिति का पता लगाने के लिए जीनोम सिक्वेंसिंग और शोध अभी भी जारी है।

शून्य कर्षण तकनीक से गेहूँ की खेती पर प्रशिक्षण

रांची के नगड़ी प्रखंड के कुदलोंग गाँव में शनिवार को शून्य कर्षण तकनीक से गेहूँ की खेती एवं वर्त्तमान परिवेश में उपयोगिता विषयक प्रशिक्षण का आयोजन किया गया. मौके पर परियोजना अन्वेंशक डॉ निभा बाड़ा ने तीन वर्षो से फारमर्स फर्स्ट प्रोग्राम के तहत गाँव में शून्य कर्षण तकनीक से गेहूँ की खेती के प्रयासों, बाधाओं एवं सफलताओं की जानकारी दी. कहा कि इस विधि से गेहूँ की खेती में करीब दो हजार रूपये प्रति एकड़ लागत कम की जा सकती है. धान कटाई के बाद खेतों में शून्य कर्षण तकनीकी से गेहूँ की खेती काफी सफल साबित हो रही है. कम सिंचाई एवं कम लागत में ही गेहूँ फसल का प्रदर्शन बढ़िया देखने को मिला है. परियोजना उप अन्वेंशक डॉ सीएस सिंह ने बताया कि यह तकनीक शून्य कर्षण यंत्र से गेहूँ की बुआई करना ही नहीं, बल्कि इसमें पुराने फसलों के अवशेषों का खेतों में आच्छादन एक महत्वपूर्ण पहलु है. इससे भूमि अपरदन से बचाव, खेत में खर-पतवार की मात्रा में कमी एवं भूमि के तापमान को नियंत्रित रखा जाता है. खेतों में फसल अवशेष सड़ने-गलने से भूमि की उर्वरा शक्ति में बढ़ाव और पौधे की वृद्धि तेजी से होती है. झारखण्ड में धान के बाद खेत की तैयारी में अधिक समय लगने से गेहूँ की बुआई में देरी होती है. धान की कटाई के दो - तीन दिनों अंदर शून्य कर्षण यंत्र से एक निश्चित गहराई में बीज एवं उर्वरक द्वारा बुआई कर सकते है. खेतों में मौजूद नमी गेहूँ के अंकुरण के लिए पर्याप्त होता है. बचे सिंचाई जल का प्रयोग गेहूँ की क्रांतिक अवस्था पर करने से बढ़िया उत्पादन लिया जा सकता है. आलोका बागे और इस तकनीक से से जुड़े किसानों ने भी अपने अनुभवों को साझा किया।

.......पेज एक का शेष

सीसीएल की पहली ग्रीनफील्ड ....

अध्यक्ष, कोल इंडिया प्रमोद अग्रवाल का कुशल नेतृत्व के लिए आभार व्यक्त किया। एमडीओ मोड सार्वजनिक व निजी क्षेत्र की भागीदारी की अवधारणा को दर्शाता है। एमडीओ मोड मेंठेकेदार/निजी कंपनी भूमि के भौतिक कब्जे, आर एंड आर, खदान के विकास और संचालन सहित कोयले क ाप्रेषण सहित अन्य संबंधित गतिविधियों खदान के लिज होल्डर के लिए क्रियान्यवित करता है। इसके एवज में खदान का लिज होल्डर एक अनुबंधित खनन शुल्क का भुगतान ठिकेदार/निजी कंपनी को करता है। एमडीओ को दोनों प्रतिभागियों के लिए आर्थिक रूप से व्यावाहारिक माना जाता है।

कोतरे बसंतपुर पंचम परियोजना में नवीनतम प्रौद्योगिकी का उपयोग सुनिश्चित करते हुये खनन गतिविधि से पर्यावरण को कम से कम नुकसान पहुंचाने का प्रावधान है। इस परियोजना के अंतर्गत केदला वाशरी से दनिया रेलवे स्टेशन तक 15 किमी का रेलवे ट्रैक विकसित किया जाएगा। खनन किए गए कोयले को क्रस कर कन्वेयर बेल्ट के माध्यम से वाशरी को आपूर्ति की जाएगी। कोयला धुलाई के बाद, विभिन्न उपभोक्ताओं के गंतव्यों तक प्रेषित करने हेतु रेल माध्यम से भेजा जायेगा। इस परियोजना में लगभग 2000 करोड़ रुपये का पूंजीगत परिव्यय किया गया है। परियोजना के प्रारंभ होने से आसपास के क्षेत्रों के ग्रामीणों को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार के अवसर मिलेगा। साथ ही आस-पास के क्षेत्रों में बुनियादी ढांचे का विकास औरविभिन्न कल्याणकारी एवं सीएसआर योजनाओं से उनके जीवनस्तर में और सुधार होगा।

रांची फारमर्स फर्स्ट प्रोग्राम के पशु चिकित्सा शिविर का समापन

रांची :बिरसा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा आईसीएआर के फारमर्स फर्स्ट प्रोग्राम तहत रांची के नगड़ी प्रखंड के चिपड़ा व कुदलोंग गाँव में दो दिवसीय पशु चिकित्सा शिविर का समापन शनिवार को हुआ. शिविर में प्रशिक्षण के दौरान में करीब 100 किसानों को पशु प्रबंधन एवं पशुओं के बेहतर स्वास्थ्य से सबंधित जानकारी दी गयी।

मुख्य परियोजना अन्वेंशक डॉ निभा बाड़ा एवं परियोजना उप अन्वेंशक डॉ रवीन्द्र कुमार ने किसानों को पशुओं के प्राथमिक रोग एवं बाह्यय परजीवी रोग, चिकित्सा जाँच की आवश्यकता, टीकाकरण का महत्त्व एवं कृमि नाशक दवा के प्रयोग विषय पर जागरूकता प्रदान की. मौके पर पशुओं के स्वास्थ्य की देख-भाल के लिए नियमित अंतराल में उपयोग हेतु किसानों को कृमि नाशक दवा का मुफ्त वितरण किया गया. शिविर में वेटनरी कॉलेज के स्नातक पाठ्यक्रम के अंतिम वर्ष में इंटर्नशिप कर रहे नरेश कुमार, विकास कुमार, आनंद कुमार एवं सरफराज आलम ने भाग लिया. छात्र दल ने दोनों गाँवों के करीब 600 बकरियों, 200 मुर्गियों, 50 गाय एवं 60 बैलों के स्वास्थ्य की जाँच की. पशुओं का टीकाकरण एवं दवा से उपचार किया. शिविर के संचालन में परियोजना से जुड़े आलोका बागे, संजय उराँव व आकाश कुमार ने सहयोग प्रदान किया।

ग्लोबल वार्मिंग से तूफान, लू, सूखे और बाढ़ में होती हैं वृद्धि

वैश्विक तापमान में वृद्धि से तूफान, बाढ़, जंगल की आग, सूखा और लू के खतरे की आशंका बढ़ जाती है। एक गर्म जलवायु में, वायुमंडल अधिक पानी एकत्र कर सकता है और बारिश कर सकता है, जिससे वर्षा के पैटर्न में बदलाव हो सकता है। बढ़ी हुई वर्षा से कृषि को लाभ हो सकता है, लेकिन एक ही दिन में अधिक तीव्र तूफानों के रूप में वर्षा होने से, फसल, संपत्ति, बुनियादी ढांचे को नुकसान होता है और प्रभावित क्षेत्रों में जन-जीवन का भी नुकसान हो सकता है। ग्लोबल वार्मिंग के कारण समुद्री सतह का तापमान भी बढ़ जाता है क्योंकि पृथ्वी के वातावरण की अधिकांश गर्मी समुद्र द्वारा अवशोषित हो जाती है। गर्म समुद्री सतह के तापमान के कारण तूफान का बनना आसान हो जाता है। मानव-जनित ग्लोबल वार्मिंग के कारण, यह आशंका जताई जाती है कि तूफान से वर्षा की दर बढ़ेगी, तूफान की तीव्रता बढ़ जाएगी और श्रेणी 4 या 5 के स्तर तक पहुंचने वाले तूफानों का अनुपात बढ़ जाएगा।

ग्लोबल वार्मिंग दो मुख्य तरीकों से समुद्र के जल स्तर को बढ़ाने में योगदान देता है। सबसे पहले, गर्म तापमान के कारण ग्लेशियर और भूमि-आधारित बर्फ की चादरें तेजी से पिघलती हैं, जो जमीन से समुद्र तक पानी ले जाती हैं। दुनिया भर में बर्फ पिघलाने वाले क्षेत्रों में ग्रीनलैंड, अंटार्कटिक और पहाड़ के ग्लेशियर शामिल हैं।

सीएमपीडीआई परिवार के 5 सदस्य सम्मानित

रांची : सीएमपीडीआई परिवार के 5 सदस्यों को 31 माच को संस्थान के ''कांफ्रेंस हॉल'' में आयोजित एक सम्मान समा-रोह में सम्मानित किया गया। इनमें वी0के0 रंजन-महाप्रबंधक (सिविल)आर0एन0 सुर-महाप्रबंधक (वित्त) एम0के0 सिन्हा-महाप्रबंधक (ईएंडटी), ए0के0 दास-महाप्रबंधक (खनन) एवं मो0 एस0के0 खान-मुख्य प्रबंधक (कार्मिक) शामिल हैं।

इस मौके पर सीएमपीडीआई के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक एस0 सरन एवं निदेशक (तकनीकी/सीआरडी) एस0 के0 गोमास्ता ने सेवानिवृत्त कर्मियों को पुष्पगुच्छ मान-पत्र प्रतीक चिह्न व शॉल देकर कम्पनी की ओर सम्मानित किया। इस अवसर पर सीएमपीडीआई के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक एस0 सरन एवं निदेशक (तकनीकी/सीआरडी) श्री एस0 के0 गोमास्ता ने सभी सेवानिवृत्त कर्मियों के लिए उज्जवल भविष्य उत्तम, स्वास्थ्य सुखी एवं दीघार्यु जीवन की कामना की। श्रमिक प्रतिनिधि प्रलय भट्टाचार्या एवं सीएमओएआई प्रतिनिध विक्रांत गुप्ता ने भी अपने-अपने विचार व्यक्त किए। मंच का संचालन वरीय प्रबंधक (कार्मिक) नवीन कुमार सिन्हा तथा धन्यवाद ज्ञापन महाप्रबंधक (कार्मिक एवं प्रशासन) श्रीमती सुनीता मेहता ने किया।

वित्तीय वर्ष 2020-21 में सीसीएल की अभूतपूर्व उपलब्धि

सीसीएल देश की उर्जा आवश्यकता को पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध : सीएमडी

वित्तीय वर्ष 2020-21 में भारत सरकार द्वारा झारखण्ड सहित पूरे देश में कारोना महामारी के कारण लॉकडाउन की घोषणा की गयी थी और कई महिनों तक विभिन्न गतिविधियां प्रभावित हुई थी। ऐसे चुनौतिपूर्ण समय में भी सीसीएल कोयला उत्पादन कर देश की उर्जा आवश्यकता को पूरा किया है। अपने उपभोक्ताओं को कोयला आपूर्ति करने के साथ-साथ सीसीएल कोरोना के विरूद्ध लड़ाई में अपनी अहम भूमिका निभा रहा है।

सीसीएल वित्तीय वर्ष 2020-21 में ओवर बर्डेन रमूव्ल में 103.62 मिलियन क्यूबिक मीटर प्राप्त किया। सीसीएल ने कोयला उत्पादन 62.59 मिलियन टन (एमटी) जबकि कोयला प्रेषण 65.4 एमटी किया है। सीसीएल के पांच कोयला खुली खदान ने अभूतपूर्व प्रदर्शन किया है जिसमें केडी हेसलौंग खुली खदान ने 1.24 एमटी उत्पादन कर 109 प्रतिशत का ग्रोथ हासिल किया है। इसी तरह मगध (8.12एमटी), आम्रपाली (14.4 एमटी), एवं अशोका (13.85 एमटी) ने क्रमशः 56%, 13% एवं 32%का ग्रोथ प्राप्त किया है।

देश में कोविड सक्रमण बढ़ने के कारण एवं कुछ महिनों लॉकडाउन होने के कारण कोयला की मांग वित्तीय वर्ष 2020-21 में कम हो गया था जिसके कारण कोयला कंपनियों की उत्पादन एवं प्रेषण भी प्रभावित हुई थी।सीसीएल अपने उपभोक्-ताओं के लिए विशेष सुविधा देते हुये अपने कुछ नियम में भी संशोधन किया और ई-ऑक्सन से संबंधित रिजर्व प्राईज को कम करके नोटिफाईड प्राईज पर ई-ऑक्सन अप्रैल, 2020से सितम्बर,

2020 के बीच में किया गया और उपभोक्ताओं को पहले की तरह प्रिमियम का भुगतान नहीं करना पड़ा। इसी तरह अन्य सुविधाएं जैसे उपभोक्ताओं को रोड के साथ-साथ रेल के माध्यम से भी कोयला प्रेषण की सुविधा प्रदान किया गया।

विगत वित्तीय वर्ष 2020-21 में सीसीएल ने रेल के माध्यम से देश के विभिन्न राज्यों में कोयला प्रेषण कर 12% का ग्रोथ हासिल किया है। ज्ञातव्-य हो कि वित्तीय वर्ष 2019-20 में जहॉ प्रतिदिन औसतन 35 रेक कोयला का प्रेषण होता था वह बढ़कर अब प्रतिदिन औसतन 39 रेक का प्रेषण हो गया है। सीसीएल ने मार्च, 2021 में अपने पूराने रिकार्ड को तोड़ते हुये एक दिन में सर्वाधिक 80 रेक का कोयला प्रेषण कर कीर्तिमान स्थापित किया है। सीएमडी, सीसीएल पी.एम. प्रसाद ने कंपनी के इस उपलब्धि के लिए पूरे सीसीएल टीम को बधाई दिया और कहा कि इस उपलब्धि में सीसीएल परिवार के एक-एक सदस्य का महत्वपूर्ण योगदान है। उन्होंने कहा कि माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के 'आत्मनिर्भर भारत'के संकल्प को माननीय कोयला मंत्री श्री प्रल्हाद जोशी के नेतृत्व में सकारात्मक रूप से सीसीएल द्वारा सतत योगदान दिया जा रहा है। सीसीएल के इस उपलब्धि मे राज्य सरकार का सहयोग सराहनीय है।

सीएमडी, सीसीएल, पी. एम. प्रसाद एवं निदेशकगण के कुशल मार्गदर्शन में सीसीएल कोयला उत्पादन के साथ-साथ समावेशी विकास के लिए प्रतिबद्ध है, इसी के अंतर्गत कोरोना काल में केन्द्रीय अस्पताल, गांधीनगर एवं रामगढ़ केन्द्रीयअस्पताल में सीसीएल के चिकित्सक टीम द्वारा कोरोना संक्रमितों का ईलाज लगभग शतप्रतिशत किया गया। इसी तरह सीसीएल अपने सीएसआर योजना के अंतर्गत वृहद स्तर पर मास्क, सैनिटाईजरतथा क्षेत्रों को सैनिटाइज किया गया। लगभग 26 करोड़ रूपये केन्द्रीय एवं राज्-य सरकार को कोरोना के विरूद्ध लड़ाई में सीसीएल द्वारा सहयोग किया गया साथ ही लगभग 1.25 करोड़ रूपये अपने कमांड क्षेत्रों के आठ जिलों में स्थानीय प्रशासन को देकर उन्हें मजबूत किया गया है। सीसीएल ने समय-समय पर विगत वित्तीय वर्ष में 151 स्वास्थ्य शिविर का आयोजन किया गया जिसमें लगभग 45626 लोग लाभान्वित हुये हैं।

वर्तमान में सीसीएल द्वारा रांची एवं रामगढ़ सहित अन्य क्षेत्रों में 9 वैक्सीनेशन सेंटर चलाया जा रहा है जिसमें अभी तक लगभग 8 हजार लोगों को टीका पड़ चुका है।

E ZONE CARE

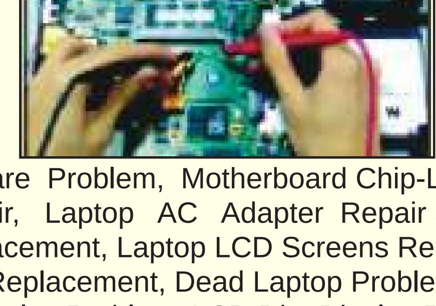

Software Problem, Motherboard Chip-Level Repair, Laptop AC Adapter Repair and Replacement, Laptop LCD Screens Repair and Replacement, Dead Laptop Problems, No Display Problem, LCD Dim Display Problem, LCD White Display Problem, BIOS Password Problem, all type of Laptop repair and service

● **Repair your laptop with 3-month warranty.**

info@ezonecare.in, ezonecare.in
Rospa Tower 3RD Floor, Main Road, Ranchi 93108 96575, 70047 69511
Mon - Fri 10:30 am - 7:00 pm

SUNDAY CLOSED

फोटो न्यूज

रांची पहाड़ी को कौन उजाड़ रहा है ?

तस्वीर रांची पहाड़ी मंदिर पर काटे गये पेड़ों की है। भले रांचीवासी रांची पहाड़ी को शहर और राजधानी की शान समझते हों, पर इस ऐतिहासिक पहाड़ी को दिन रात बर्बाद किया जा रहा है। हाल में इस पर झाड़ियों में आग लग गयी थी। हमारे एक सुधि पाठक ने वीडियो भेजी है जिसमें इसके एक हिस्से से बड़ी संख्या में पेड़ों को काटा गया है। ये पेड़ सखुआ के थे और बड़े हो गये थे।साथ ही इस पर मिट्टी काट कर गडढे भी बना दिये गये हैं।

रांची पहाड़ी पहले से ही भयंकर अतिक्रमण का शिकार है, साथ ही इसके साथ खिलवाड़ करने का चलन भी है। कभी इस पर सबसे बड़े तिरंगे को फहराने की नौटंकी तो कभी इसके शीर्ष पर खतरनाक बेतरतीब निर्माण तो कभी चोरी छुपे निजी इंटरनेट सर्विस देने वाली कंपनियों का उपकरण को लगाना। ये सब अनवरत सालों से होते आया है। यही कारण है कि हिमालय से भी पुराने इस पहाड़ी का हर रोज क्षरण हो रहा है।

वर्तमान में इसके एक बड़े हिस्से से जंगलों एवं पेड़ो की कटाई कर इसे साफ कर इसके अतिक्रमण का ही एक प्रयास है। अफसोस ये सब प्रशासन के नाक के नीचे ही हो रहा है।

हिमाचल के जंगलों में आग के सौ से ज्यादा मामले

रोहित पराशर

हिमाचल प्रदेश में मार्च माह में 294 जगह जंगलों में आग लगी थी, जबकि अप्रैल के पहले पांच दिन 100 से अधिक जगह आग लगी

उत्तराखंड की तरह हिमाचल प्रदेश में भी अप्रैल माह शुरू होते ही जंगलों में आग की घटनाएं बढ़ गई हैं। हालांकि यहां भी मार्च माह में जंगलों में आग लग रही थी।

हिमाचल प्रदेश वन विभाग के आंकड़ों के मुताबिक मार्च 2021 में हिमाचल प्रदेश के जंगलों में 294 जगह आग लगी थी, जबकि अप्रैल के पहले पांच दिन के दौरान जंगलों में 100 से अधिक जगह आग लग चुकी है। ऐसे में वन विभाग ने हिमाचल सरकार से आग पर काबू पाने के लिए हैलीकॉप्टर की मांग भी की है और इसको लेकर वायु सेना की मदद लेने की भी तैयारी है।

विभाग के मुताबिक, जंगल में आग की सबसे अधिक घटनाएं उत्तराखंड के साथ सटे सिरमौर जिला में देखी गई हैं। यहां पिछले पांच दिनों से जंगल सुलग रहे हैं और इसमें लाखों की वन संपदा खत्म होने के साथ वन्य प्राणियों की भी हानि हुई है। अगर पिछले साल से तुलना करें तो पिछले साल कुल मिलाकर 1,027 वनों में आग की घटनाएं दर्ज की गई थी। जिसमें 8,480 हेक्टेयर जंगलों में वन संपदा को नुकसान पहुंचा है। वहीं इस साल वनों की आग की घटनाएं जल्दी शुरू होने और फायर सीजन के जल्द शुरू होने के चलते वन विभाग ने अपने कर्मचारियों की छुट्टियां रद्द कर दी हैं।

गौरतलब है कि पिछले कुछ वर्षों में आगजनी की घटनाओं में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। वन विभाग के आंकडों के अनुसार जहां वर्ष 2015-16 में 672 घटनाओं में 5,750 हैक्टेयर वन भूमि को क्षति पहुंची थी, वहीं वर्ष 2016-17 में 1,832 आग की घटनांए दर्ज की गई थी। इसी तरह 2017-18 में 1,164 और 2019-20 में 1,445 और 2020-21 में 1,027 घटनाएं दर्ज की गई थी। क्योंकि इस साल मॉनसून और विंटर सीजन में कम बारिश और कम बर्फबारी के कारण हिमाचल प्रदेश में सूखे जैसे हालात बने हुए हैं, तो ऐसे में इस बार प्रदेश में वनों में आग की घटनाओं को बढ़ोतरी होना तय माना जा रहा है।

पिछले साल मानसून सीजन में 28 फीसदी कम बारिश दर्ज की गई थी, जिसके चलते मानसून के बाद महिनों में भी वनों में आग की घटनाओं को देखा गया था। वहीं इस साल सर्दियों के सीजन में जनवरी माह में 58 फीसदी, फरवरी में 80 फीसदी और मार्च में 62 फीसदी कम बारिश होने की वजह से भूमि में नमी बहुत कम है। विशेषज्ञों का मानना है कि मौसम में आए बदलाव की वजह से हिमाचल में इस बार गर्मियां अधिक बढ़ गई हैं, जिससे आगजनी की घटनाओं में वृद्धि होगी। हिमाचल प्रदेश में वन विभाग की कुल 2026 बीटें हैं जिनमें से 339 अति संवेदनशील श्रेणी में आती हैं। ऐसे में इन संवेदनशील बीटों में आग की घटनाओं पर नजर रखने के लिए वन विभाग ने मुस्तैदी बढ़ा दी है।

वन विभाग की पीसीसीएफ डॉ सविता का कहना है कि इस साल बारिश और बर्फबारी कम हुई है जिसकी वजह से जमीन में नमी कम है। इस कारण आग के ज्यादा मामले देखने को मिल रहे हैं। वनों में आग में नियंत्रण पाने के लिए विभाग की ओर से इस बार तकनीक का भी सहारा लिया जा रहा है। इसके अलावा सरकार से हेलीकॉप्टर की मांग भी की गई है ताकि आग में जल्दी नियंत्रण पाया जा सके।

फिर बढ़ा देश में कोरोना संक्रमण

एजेंसियां

एक साल से भी ज्यादा वक्त से कोविड-19 के खिलाफ जंग लड़ते भारत में स्थिति एक बार फिर बिगड़ने लगी है। पिछले महीने से देश में इस महामारी की दूसरी लहर शुरु हो गई है जिसमें संक्रमण ज्यादा तेजी से फैल रहा है। यदि स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा आज यानी 07 अप्रैल, 2021 को जारी आंकड़ों को देखें तो पिछले 24 घंटों में 115736 नए मामले सामने आए हैं, जबकि 630 लोगों की जान गई है। जो दिखता है कि इस महामारी का प्रकोप एक बार फिर बढ़ने लगा है।

ऐसे में संक्रमण की यह नई लहर देश में स्वास्थ्य सम्बन्धी बुनियादी ढांचे के लिए एक बड़ी चुनौती है। साथ ही यह पिछले करीब एक वर्ष में हमने इस दिशा में क्या प्रगति की है उसको भी परखने की घड़ी है। गौरतलब है कि भारत में स्वास्थ्य से जुड़े बुनियादी ढांचे में सुधार करने के लिए केंद्र सरकार ने 22 अप्रैल, 2020 को 15,000 करोड़ रुपये के पैकेज को मंजूरी दी। जिससे देश में इस महामारी से निपटने के लिए बुनियादी सुविधाओं का विकास किया जा सके। राज्यों ने इस पैसे का उपयोग आईसीयू में बेडों, ऑक्सीजन-समर्थित बेड और वेंटिलेटर्स की संख्या बढ़ाने के लिए किया है। स्वास्थ्य और परिवार कल्याण राज्य मंत्री अश्विनी कुमार चौबे द्वारा 02 फरवरी 2021 को राज्यसभा में प्रस्तुत आंकड़ों के अनुसार, अप्रैल 2020 तक देश में ऑक्सीजन की सुविधा युक्त 62,458 बेड थे, जो जनवरी 2021 में बढ़कर 157,344 हो गए थे जिसका मतलब है कि इस दौरान 94,880 नए बेड जोड़े गए थे। वहीं यदि राज्य स्तर पर देखें तो इस अवधि में महाराष्ट्र में 16,000 और तमिलनाडु में 17,000 नए बेडों की व्यवस्था की गई थी।

मक्के की फसलों को नुकसान पहुंचाता है ओजोन प्रदूषण

एजेंसियां

एक अध्ययन के मुताबिक, ओजोन प्रदूषण मक्के की फसलों की उपज में 25 फीसदी की कमी कर सकता हैं। स्ट्रैटोस्फेरिक ओजोन, सूर्य की पराबैंगनी किरणों को छानकर हमारी रक्षा करती है, लेकिन ट्रोपोस्फेरिक ओजोन एक हानिकारक प्रदूषक है। एक नए अध्ययन से पता चला है कि वायुमंडल की निचली परतों में जमा ओजोन मक्के की फसल की पैदावार को घटाती है और इनके पत्तियों के अंदर पाए जाने वाले अलग-अलग रसायनों को बदल देती है।

जेसिका वेडोव ने कहा कि उत्तरी गोलार्ध में ओजोन प्रदूषण अधिक होता है और गर्मी के मौसम में प्रदूषण बढ़ जाता है। ओजोन प्रदूषण की उच्च सांद्रता फसल की वृद्धि के साथ अस्थायी रूप और स्थानिक रूप से जुड़ा है, इसलिए यह जानना महत्वपूर्ण है कि गंभीर रुप से प्रदूषित ओजोन फसल की पैदावार को कैसे प्रभावित करता है। ट्रोपोस्फेरिक या जमीनी स्तर की ओजोन का निर्माण तब होता है जब कार, बिजली संयंत्र, औद्योगिक बॉयलर, रिफाइनरी, रासायनिक संयंत्र और अन्य स्रोतों से उत्सर्जित प्रदूषक रासायनिक रूप से सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में प्रतिक्रिया करते हैं। ट्रोपोस्फेरिक या जमीनी स्तर की ओजोन सीधे हवा में उत्सर्जित नहीं होती है, लेकिन यह नाइट्रोजन (एनओएक्स) और वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों (वीओसी) के ऑक्साइड के बीच रासायनिक प्रतिक्रियाओं के द्वारा बनती है।

इलिनोइस विश्वविद्यालय के शोधकर्ता अर्बाना शैंपेन 20 वर्षों से फसलों पर ओजोन प्रदूषण के प्रभावों का अध्ययन कर रहे हैं, जहां फसलों को वास्तविक दुनिया के खेत की परिस्थितियों में उगाया जा सकता है, लेकिन ओजोन प्रदूषण की बढ़ी हुई सांद्रता के साथ। शोधकर्ताओं ने तीन प्रकार के मक्के पर शोध किया, जिनमें दो को स्वाभाविक पंक्तियों (इनब्रेड लाइन) में बी73 और एमओ17, और तीसरा संकर (हाइब्रिड क्रॉस) बी73 .एमओ17। उन्होंने पाया कि पुराने ओजोन तनाव के कारण संकर (हाइब्रिड) फसलों के उपज में 25 फीसदी की कमी आई, जबकि इनब्रेड पौधे अप्रभावित रहे।

स्वच्छता के क्षेत्र में रजरप्पा, कुजू और सीसीएल मुख्यालय सम्मानित

संवाददाता

स्वच्छता अभियान को सफल बनाना हम सभी की नैतिक जिम्मेदारी : सीएमडी

सीसीएल मुख्यालय, रांची स्थित 'कन्वेंशन सेंटर' में 'सम्मान समारोह' का आयोजन किया गया। बैठक के दौरान सीएमडी, सीसीएल पी.एम. प्रसाद ने सीसीएल के रजरप्पा एवं कुजू क्षेत्र सहित सीसीएल मुख्यालय, रांची को विशेषकर स्वच्छता माह में स्वच्छता हेतु उल्लेखनिय कार्यों के लिए सम्मानित किया। रजरप्पा क्षेत्र की ओर से महाप्रबंधक आलोक कुमार एवं कुजू क्षेत्र की ओर से महाप्रबंधक आई.सी. मेहता जबकि सीसीएल मुख्यालय, रांची की ओर से महाप्रबंधक ए.के. सिंह ने यह स्वच्छता अवार्ड प्राप्त किया। इस अवसर पर निदेशक तकनीकी भोला सिंह सहित विभिन्न विभागों के महाप्रबंधक, विभागाध्यक्ष एवं अन्य नोडल अधिकारी उपस्थित थे।

हाल ही में कोयला मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली के निर्देशानुसार सीसीएल में एक कमिटि बनायी गयी थी। कमिटि ने स्वच्छता संबंधी सभी मापदंडों का मूल्यांकन करते हुये सीसीएल के रजरप्पा एवं कुजू क्षेत्र सहित सीसीएल मुख्यालय, रांची को पुरस्कार हेतु चयनित किया। हाल ही में कोयला मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड (सीसीएल) के रजरप्पा क्षेत्र को स्वच्छता के क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य के लिए 'प्रथम पुरस्कार' से सम्मानित किया था। सीसीएल मुख्यालय सहित पूरे सीसीएल में विशेषकर स्वच्छता माह में स्वच्छता संबंधी विभिन्न कार्यों जैसे कोरोना समय में अस्पतालों का पूर्ण सैनीटाईजेशन, आसपास के क्षेत्र में नालियों की सफाई, साथ ही झाड़ियों की कटाई, स्थानीय दुकानदारों के बीच कागज का कप एवं पेपर स्ट्रॉ का वितरण, सफाई कर्मियों के बीच ग्लब्स एवं फेस मास्क आदि का वितरण एवं सभी को इसका उपयोग करने हेतु प्रेरित किया गया।

सीएमडी पी. एम. प्रसाद ने पुरस्कृत क्षेत्रों को बधाई देते हुये कहा कि हम सभी को स्वच्छता अभियान में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेना है जिसकी शुरूआत सर्वप्रथम स्वंय से करना है तथा दूसरो को भी प्रेरित करना है।

वैज्ञानिकों ने एल्युमीनियम से बनाई पर्यावरण के अनुकूल बैटरियां

एजेंसियां

वैज्ञानिकों ने एल्युमीनियम की मदद से नई तरह की बैटरियां बनाने में सफलता हासिल की है जो किफायती होने के साथ ही पर्यावरण के भी अनुकूल हैं।

कॉर्नेल यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने एल्युमीनियम की मदद से रिचार्जेबल बैटरी बनाने में सफलता हासिल की है जो न केवल सस्ती है साथ ही इसे ज्यादा लम्बे समय तक चल सकती हैं। हाल ही में सौर ऊर्जा के उत्पादन और उसकी लागत में कमी आई है साथ ही पर्यावरण के दृष्टिकोण से इसके फायदों को देखते हुए इसका बड़ी तेजी से विकास हो रहा है।इसके बावजूद एक बड़ा सवाल जो हमेशा से परेशान करता रहा है वो इसके भंडारण को लेकर है आज भी सौर ऊर्जा भण्डारण के लिए बैटरियों के विकास पर काम चल रहा है।

वैज्ञानिक चाहते है कि ऐसी बैटरियां बनाई जाएं जो न केवल हर मौसम में ऊर्जा की खपत को पूरा कर सकें साथ ही उनकी कीमत भी कम हो इसी को देखते हुए कॉर्नेल यूनिवर्सिटी के शोधकर्ता लिंडन आर्चर और उनकी टीम लम्बे समय से इस पर काम कर रही है वो उन सामग्रियों की तलाश में हैं जिससे बैटरी बनाने की लागत को कम किया जा सकें जिससे ऊर्जा भण्डारण को किफायती बनाया जा सके। हाल ही में उन्होंने इसमें सफलता भी हासिल की है उन्होंने एल्यूमीनियम की मदद से रिचार्जेबल बैटरी बनाने की एक नई तकनीक विकसित की है इसकी मदद से बनी बैटरियां बिना किसी रूकावट और गलती के 10,000 बार रिचार्ज और उपयोग की जा सकती हैं। यह बैटरियां न केवल वर्तमान में उपलब्ध लिथियम- आयन बैटरी की तुलना में सुरक्षित हैं साथ ही पर्यावरण के लिए भी अनुकूल हैं लिथियम-आयन बैटरियों की सबसे बड़ी समस्या है कि वो धीमी रफ़्तार से चार्ज होती हैं साथ ही उनमें आग पकड़ने का खतरा भी बना रहता है इससे जुड़ा शोध अंतराष्ट्रीय जर्नल नेचर एनर्जी में प्रकाशित हुआ है

इनके निर्माण में एल्युमीनियम और कार्बन का किया जाता है इस्तेमाल

इस शोध से जुड़े प्रमुख शोधकर्ता जिंग्क्सु (केंट) ज़्हेंग ने बताया कि इन बैटरियों में एक दिलचस्प बात यह है कि इसमें एनोड और कैथोड के लिए केवल दो तत्वों एल्यूमीनियम और कार्बन का उपयोग किया जाता है यह दोनों ही सस्ते और पर्यावरण के अनुकूल हैं साथ ही यह लम्बे समय तक काम करते हैं जब हम ऊर्जा के भण्डारण और उसमें लगने वाली लागत की गणना करते हैं तो यह बात बहुत मायने रखती है इन बैटरियों को कई बार लम्बे समय तक रिचार्ज और इस्तेमाल किया जा सकता है, जो इसकी कीमत को और कम कर देता है। एल्यूमीनियम का एक फायद यह भी है कि वो पृथ्वी की ऊपरी सतह पर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, यह न केवल कई धातुओं के गुण रखता है साथ ही हल्का भी है इसलिए इसमें कई अन्य धातुओं की तुलना में अधिक ऊर्जा संग्रहीत करने की कहीं ज्यादा क्षमता है।हालांकि, एल्यूमीनियम को बैटरी के इलेक्ट्रोड के रूप में करना मुश्किल है। क्योंकि यह ग्लास फाइबर के बने उन विभाजकों के साथ रासायनिक रूप से प्रतिक्रिया करता है, जो एनोड और कैथोड को विभाजित करने के लिए लगाए जाते हैं, जिससे बैटरी में शॉर्ट सर्किट हो सकता है और वो खराब हो जाती है।

शोधकर्ताओं ने इस समस्या का समाधान ढूंढ लिया है उन्होंने इसके लिए उन्होंने आपस में बुने हुए कार्बन फाइबर का एक सब्सट्रेट डिजाइन तैयार किया है जो एल्यूमीनियम के साथ एक मजबूत रासायनिक बंधन बनाता है। जब बैटरी को चार्ज किया जाता है, तो एल्यूमीनियम को सहसंयोजक बंधन के माध्यम से कार्बन संरचना में जमा हो जाता है जिससे एल्यूमीनियम और कार्बन परमाणुओं के बीच इलेक्ट्रान आपस में जुड़ जाते हैं हालांकि पारंपरिक रिचार्जेबल बैटरियों में इलेक्ट्रोड केवल दो आयामी होते हैं, लेकिन इस तकनीक में तीन-आयामी - या नॉनप्लेनर संरचना का उपयोग किया जाता है जिससे एल्यूमीनियम की एक गहरी, अधिक सुसंगत लेयरिंग बनाती है जिसे ज्यादा महीनता से नियंत्रित किया जा सकता है इस तरह की एल्यूमीनियम-एनोड वाली बैटरियों को न केवल चार्ज किया जा सकता है बल्कि इसकी मदद से अन्य उपकरणों को भी चार्ज (रिवर्स चार्जिंग) किया जा सकता है। **ललित मौर्य**

गंगा की सहायक गोमती नदी नाले में हो रही तब्दील

रणविजय सिंह

गंगा की सहायक नदी गोमती प्रदूषण का दंश झेल रही है। गोमती में करीब 68 नालों का गंदा पानी घुल रहा है। लखनऊ और सीतापुर जैसे छोटे-बड़े शहरों का करोड़ों लीटर गंदा पानी रोज इस नदी में गिराया जाता है।

गोमती प्रदूषण नियंत्रण इकाई ने साल 2019 में 'नमामी गंगे' के तहत तीन सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट बनाने का प्रस्ताव केंद्र सरकार को भेजा। हालांकि 2 साल बाद भी इसपर कोई काम नहीं हुआ है।

वशिषज्ञों के मुताबिक गोमती में प्रदूषण की स्थिति ऐसी ही बनी रही तो जल्द ही यह नदी नाले में तब्दील हो जाएगी।

''गोमती में अब वो बात नहीं रही,'' आंखों में मायूसी लिए मोहम्मद इरफान कहते हैं। इरफान उत्तर प्रदेश के लखनऊ में गोमती नदी के किनारे कपड़ों की धुलाई का काम करते हैं। गोमती से उनका नाता बचपन से जुड़ा है। ''मेरे बाप-दादा यही काम करते आए हैं। पहले हम खाना खाने के बाद नदी का पानी पीते थे, इसमें नहाते थे, अब तो मुंह धोने की भी हिम्मत नहीं होती, इतनी गंदगी और बदबू आती है,'' इरफान बताते हैं। गोमती नदी को लेकर ऐसे ख्याल इस नदी के आस-पास रहने वाले तमाम लोगों के हैं। इसमें मछुआरे, कपड़े धोने वाले और गोमती के घाट पर आने वाले लोग शामिल हैं। इन लोगों के इतर नदी के जीवन को समझने वाले विशेषज्ञों और 'गोमती प्रदूषण नियंत्रण इकाई' के अधिकारियों का भी मानना है कि गोमती नदी नाले में तब्दील होती जा रही है।

गोमती के बिना कैसे साफ होगी गंगा

गोमती नदी गंगा की सहायक नदियों में से एक है। पीलीभीत के माधवटांडा में गोमत ताल से गोमती का उद्गम होता है और फिर शहाजहांपुर, सीतापुर, लखनऊ, सुल्तानपुर होते हुए करीब 821 किलोमीटर की दूरी तय कर यह जौनपुर में गंगा नदी में मिल जाती है। गंगा में मिलने से पहले गोमती किस कदर प्रदूषति होती है इसका अंदाजा लखनऊ के रबर डैम के पास गोमती में बनने वाले गाज से लगाया जा सकता है। यह डैम लखनऊ में गोमती के निकास पर बना है। लखनऊ रिवर फ्रंट के आखिरी छोर पर बने इस डैम के पास नदी सफेद रंग के गाज से पटी रहती है। डैम के पास ही राजेश यादव गाय-भैंसों को रखकर दूध बेचने का काम करते हैं। राजेश बताते हैं, ''नदी में पिछले 2-3 साल से ज्यादा ही गाज आ रहा है। कई बार तो पशुओं को नदी में भेजने से भी घबराहट होती है, पता नहीं कौन सा रोग हो जाए।''गोमती का यह प्रदूषण गंगा नदी की सफाई के दावों की पोल भी खोलता है। 'गोमती प्रदूषण नियंत्रण इकाई' के जनरल मैनेजर राकेश कुमार अग्रवाल बताते हैं, ''गोमती नदी के लिए लखनऊ में हमारे दो सीवेज ट्रीटमेंट प-लांट हैं। पहला 34.5 करोड़ लीटर का भरवारा प्लांट और दूसरा दौलतगंज में 5.6 करोड़ लीटर का प्लांट है। इनकी क्षमता 40.1 करोड़ लीटर की है और यह दोनों पूरी क्षमता पर काम कर रहे हैं। जबकि लखनऊ में गंदे पानी का डिस्चार्ज 60 करोड़ लीटर से ज्यादा है, ऐसे में 20 करोड़ लीटर से अधिक गंदा पानी बिना ट्रीट किए ही गोमती में जा रहा है।

राकेश अग्रवाल कहते हैं, ''हमारा प्लान था कि 2022 तक गोमती नदी में जाने वाले सभी नालों का गंदा पानी ट्रीटमेंट प्लांट से होकर गुजरे। इसके लिए दो साल पहले (2019) 'नमामी गंगे' के तहत तीन सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट बनाने का प्रस्ताव केंद्र सरकार को भेजा गया। इसमें से एक पर मंजूरी मिली, लेकिन वो कोर्ट केस में फंस गया और बाकी के दो प्लांट को मंजूरी नहीं मिली है। इसके अलावा हैदर नाले पर 12 करोड़ लीटर का का ट्रीटमेंट प्लांट बन रहा था, वो भी फंड न होने की वजह से आधा बनकर रुका पड़ा है। राकेश अग्रवाल जसि हैदर नाले की बात कर रहे हैं वो लखनऊ के 1090 चौराहे के पास गोमती नदी में गिरता है। इस नाले से 15.8 करोड़ लीटर प्रतिदिन गंदा पानी आता है, जिसमें से केवल 8.7 करोड़ लीटर पानी ही ट्रीट होने के लिए भरवारा प्लांट भेजा जाता है। बाकी का 7.1 करोड़ लीटर गंदा पानी सीधे गोमती में गिरा दिया जाता है। इसी नाले पर सीवेज ट्रीटमेंट प्लांट बन रहा था, जो अभी अधर में अटका हुआ है। प्लांट बनने के कारण नाले को कई जगह रोका गया है, जिसकी वजह से यह नाला प्लास्टकि से पटा दिखाई देता है।ऐसा नहीं कि गोमती नदी लखनऊ में आकर ही प्रदूषति होती है। गोमती के प्रदूषति होने की शुरुआत सीतापुर से होती है जो लखनऊ में आकर सबसे खराब स्थ-िति में पहुंच जाती है। अपने 821 किलोमीटर के बहाव में गोमती सीतापुर से लेकर जौनपुर तक करीब 628 किलोमीटर तक प्रदूषण का दंश झेल रही है।

यूपी पॉल्युशन कंट्रोल बोर्ड की ओर से राज्य की नदियों की गुणवत्ता की जांच की जाती है।जनवरी 2021 की रिपोर्ट के मुताबिक, गोमती नदी लखनऊ के डाउनस्ट्रीम में 'ए' कैटेगरी में थी, जो कि सबसे खराब कैटेगरी है। ये इंसानों के पीने और नहाने की तो बात ही अलग, इसमें जलीय जीव भी जिंदा नहीं रह सकते थे।

मछुआरों पर गोमती की गंदगी का असर गोमती के प्रदूषण का असर इस इलाके के मछुआरों पर भी पड़ा है। लखनऊ के गऊ घाट के रहने वाले संतराम निषाद करीब 20 साल से गोमती में मछली पकड़ते आए हैं। उनके मुताबिक पानी गंदा होने की वजह इस इलाके में मछली नहीं मिलती। जब साफ पानी था तो रोहू, नैनी जैसी मछलियां मिल जाती थीं, लेकिन अब मांगुर, टेंगन, चैना जैसी छोटी मछलियां मिलती हैं।अब गंदा पानी होने की वजह से मछलियां गायब होती गईं और उन्होंने यह काम छोड़ ही दिया। मजदूरी का काम करते हैं।

अखबार के स्वामी सन कम्युनिकेशन के लिये प्रकाशक एवं मुद्रक मनोरंजन सिंह द्वारा मेसर्स डी. बी. कॉर्प लिमिटेड,प्लॉट नं535 एवं 1272 ललगुटवा पुलिस स्टेशन, रातू, रांची (झारखंड) से मुद्रित एवं सन कम्युनिकेशन,अपोजिट कब्रिस्तान गेट नं.-2,रातू रोड, रांची- 834001 (झारखंड) से प्रकाशित। संपादकः एम.के.शर्मा * (पी.आर.बी. अधिनियम के तहत खबरों के चयन के लिये उत्तरदायी)आर.एन.आइ. पंजीयन क्रमांक : JHAHIN/2019/78094, email:greenrevolt2019@gmail.com. ☎ 0651-2283018, 8539978825, 8825374626. समस्त विवाद रांची न्यायालय के अधीन होंगे।